खण्ड

4

विश्रुतचरितम् (1–15 परिच्छेद तक)

इकाई–15

विश्रुतचरितम् परिचय (कथावस्तु, पात्रचित्रण, वैशिष्ट्य आदि)

इकाई–16

महाकवि दण्डी की भाषा–शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्, कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशय)

इकाई–17

विश्रुतचरितम् (1–10 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

इकाई–18

विश्रुतचरितम् (11–15 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 15 विश्रुतचरितम् परिचय (कथावस्तु, पात्रचित्रण, वैशिष्ट्य आदि)

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 आचार्य दण्डी का जीवनवृत्त एवं कर्तृत्व

15.3 विश्रुतचरितम् की कथावस्तु

15.4 विश्रुतचरितम् में पात्र–चित्रण

- 15.4.1 पुण्यवर्मा
- 15.4.2 अनन्तवर्मा
- 15.4.3 नालीजङ्घ
- 15.4.4 मंत्री वसुरक्षित
- 15.4.5 सेवक विहारभद्र

15.5 विश्रुतचरितम् का वैशिष्ट्य

15.6 सारांश

15.7 शब्दावली

15.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

15.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- दण्डी के जीवनवृत्त एवं उनकी रचना से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् की कथावस्तु से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् के मुख्य पात्रों से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् के वैशिष्ट्य से परिचित हो जायेंगे।
- विश्रुतचरितम् में प्रयुक्त साहित्यिक शब्दावली से परिचित हो जायेंगे।

15.1 प्रस्तावना

संस्कृत काव्य के दो प्रमुख भेद माने गये हैं दृश्य तथा श्रव्य काव्य। जिसे देखा जा सके अथवा जिसका मंचन किया जा सके, उसे दृश्य काव्य कहते हैं। सम्पूर्ण नाट्यसाहित्य दृश्य काव्य के अन्तर्गत आता है। श्रव्य काव्य के पुनः तीन भेद माने गये है पद्य, गद्य एवं मिश्र। छन्दोबद्ध रचना पद्य तथा छन्दों के बन्धन से मुक्त रचना गद्य कही जाती है। मिश्र काव्य के अन्तर्गत चम्पूकाव्य आते हैं। इनमें गद्य तथा पद्य दोनों का प्रयोग किया जाता है।

आचार्य दण्डी संस्कृत के प्रथम गद्यकार है, क्योंकि सबसे प्राचीन कृतियाँ इनकी ही उपलब्ध होती है। इनकी एक रचना का नाम दशकुमारचरितम् है। दशकुमारचरितम् दण्डी का प्रसिद्ध गद्य काव्य है। ग्रन्थ सरलता, सरसता तथा कौतूहलपूर्णता के लिए विशेष रूप से विख्यात् है। यह तो इसके नाम से ही प्रकट है कि इसमे दशकुमारों के चरित का संकलन किया गया है। इसका वर्तमान उपलब्ध स्वरूप तीन भागों में विभक्त है–1.पूर्वपीठिका–इसके अन्तर्गत पाँच उच्छवास है। 2.उत्तरपीठिका, 3.इन दोनों के मध्य पुस्तक का मूल भाग है, जिसमें आठ उच्छवासों में आठ कुमारों की कथाएँ वर्णित है। विश्रुत की कथा दशकुमारचरितम् नामक भाग के अष्टमोच्छ्वास में आती है। इसमें विश्रुत शेष कुमारों को अपना यात्रा अनुभव बताता है।

विश्रुतचरितम् (1–15 परिच्छेद तक) के अन्तर्गत इकाई 15 विश्रुतचरितम् परिचय (कथावस्तु, पात्र चित्रण एवं वैशिष्ट्य) आदि के अन्तर्गत दशकुमारचरितम् (विश्रुतचरितम्) की कथा बृहत्कथा से ली गयी है। बृहत्कथा के नरवाहनदत्त और उसके साथियों के समान ही इसमें भी दस कुमार साहसिक कार्यों के लिए निकलते हैं और वापस मिलने पर उनका वर्णन करते हैं। विश्रुतचरितम् की कथावस्तु का कथानक घटना प्रधान है। विस्मय और रोमांच से भरे पर्यटन और पराक्रम के विवरण इसमें पद–पद पर हैं। कुछ लोग इसे 'धूर्तों के रोमांस' की संज्ञा देते है। छल–कपट, मारकाट, चोरी से ओतप्रोत यह एक सजीव कृति है। व्यंग्य के साथ इसमें समाज का चित्रण किया गया है। दम्भी तपस्वी, कपटी ब्राह्मण, धूर्त कुट्टनी और व्यभिचारिणी स्त्रियों आदि का इसमें खूब उद्घाटन हुआ है। दण्डी का पात्र–चित्रण विशद है। विश्रुतचरितम् में पात्र–चित्रण के अर्न्तगत राजा पुण्यवर्मा, अनन्तवर्मा, नालीजङ्घ मंत्री वसुरक्षित, सेवक विहारभद्र का चरित्र चित्रण दर्शाया गया है। विश्रुतचरितम् के वैशिष्ट्य के अर्न्तगत रचना–कौशल दर्शनीय हैं।

15.2 आचार्य दण्डी का जीवनवृत्त एवं कर्तृत्व

जीवनवृत्त–

'अवन्तिसुन्दरीकथा' नामक गद्यकाव्य की प्राप्ति से पूर्व दण्डी के जीवन–वृत्तान्त के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं था। इस काव्य के प्रारम्भ में दण्डी ने अपने परिवार के तथा अपने जीवन के वृत्तान्त के सम्बन्ध में कुछ लिखा है। इसके अनुसार दण्डी के पूर्वज नारायण स्वामी के एक पुत्र दामोदर नाम के हुये। दामोदर की 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य के लेखक भारवि से मित्रता थी। ये कांचीनरेश विष्णुवर्धन की राजसभा में आये थे। दामोदर के तीन पुत्र हुए। उनमें मंझले पुत्र का नाम मनोरथ था। मनोरथ के चार पुत्र हुए, जिनमें सबसे छोटे पुत्र का नाम वीरदत्त था। वीरदत्त तथा उनकी पत्नी गौरी दण्डी के माता–पिता थे। ये दोनों ही दण्डी की बाल्यावस्था में स्वर्गवासी हो गये।

दामोदर के पूर्वज पश्चिमोत्तर प्रदेश के आनन्दपुर नामक स्थान पर रहते थे। वहाँ से ये नासिक के अचलपुर नामक स्थान पर आकर बस गये। दामोदर की मैत्री कांची के राजा विष्णुवर्धन से हो गई। परन्तु विष्णुवर्धन के अनाचार से दुखी होकर वे गंगवंशीय राजा दुर्विनीत के यहाँ रहने लगे। तदनन्तर वे कांची के पल्लववंशी राजा सिंहविष्णु के आश्रय में रहे। सिंहविष्णु के राज्यारोहण का समय 575 ई॰ निश्चित किया गया है। इसका पुत्र महेन्द्रवर्मा हुआ। महेन्द्रवर्मा का पुत्र नृसिंहविष्णु नाम से भी प्रसिद्ध हुआ था। इसका राज्य 625–645 ई॰ तक रहा। विवरणों से प्रतीत होता है कि भारवि इस

राजा की राजसभा में रहे थे। अतः भारवि का समय 610–645 ई॰ रहा होगा। दण्डी के प्रपितामह भारवि के मित्र थे, अतः दण्डी का जन्म 650 ई॰ के लगभग हुआ होगा।

दण्डी की बाल्यावस्था में ही उनके माता–पिता की मृत्यु हो गई थी। इस समय कांची में महान् विप्लव हुआ और इस नगरी का महान विनाश हुआ। उस समय दण्डी इस नगरी को छोड़कर चले गये। वर्षों तक अनेक स्थानों पर भ्रमण करके विद्याध्ययन करते रहे। अन्त में युवा होने पर वे कांची में वापस आये । यहाँ सरस्वती के आदेश से इन्होंने अपने मित्रों को विद्याधर–नरेश राजवाहन की कथा सुनाई, जो कि 'अवन्तिसुन्दरीकथा' के नाम से प्रसिद्ध है।

जैसा कि पहले कहा गया है कि दण्डी के प्रपितामह दामोदर की भारवि से मित्रता थी। भारवि का सर्वप्रथम उल्लेख चालुक्यवंशी राजा पुलकेशिन, द्वितीय के ऐहोल शिलालेख 634 ई॰ में मिलता है–

येनायोजि न वेष्म स्थिरमर्थविधौ विवेकिना जिनवेष्म।
स विजयतां रविकीर्तिः कविताश्रितकालिदासभारविकीर्तिः।।

ऐहोल का शिलालेख

विष्णुवर्धन ने जो कि पुलकेशिन द्वितीय का भाई या पुत्र कहा जाता है, आन्ध्र और कलिंग में चालुक्य वंश का राज्य स्थापित किया था। उसका शासन काल 615–633 ई॰ तक रहा। इसकी राजसभा में दण्डी के प्रपितामह दामोदर आये थे। दण्डी को हम इनके 50 वर्ष बाद का रख सकते हैं। अतः दण्डी का समय सातवीं शताब्दी का उत्तरार्ध हो सकता है। भारवि या तो पुलकेशिन् के समकालीन रहे होगें, या उससे कुछ पहले हुये होंगे। भारवि कृति 'किरातार्जुनीयम्' पर राजा दुर्विनीत ने जिनके आश्रय में कुछ समय तक दामोदर रहे थे, एक टीका लिखी थी–

किरातार्जुनीये पंचदशसर्गे टीकाकारेण दुर्विनीतमधेयेन।

दण्डी ने 'अवन्तिसुन्दरीकथा' में भास, सुबन्धु, बाण, मयूर आदि कवियों का उल्लेख किया है, अतः इनको इन सबका उत्तरवर्ती होना चाहिए। यद्यपि बाण और मयूर से इनका समय बहुत बाद का न होकर निकटवर्ती ही होना चाहिये तथा इनकी ग्रन्थ–रचना का काल 675–710 ई॰ का सरलता से माना जा सकता है।

कर्तृत्त्व–

राजशेखर ने शाङ्र्गधर पद्धति में दण्डी की तीन कृतियों का उल्लेख किया है–

त्रयोऽग्नयस्त्रयो देवास्त्रयो वेदास्त्रयो गुणाः।
त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः।।

दण्डी की यह तीन रचना है–

1. काव्यादर्श
2. दशकुमारचरितम्
3. अवन्तिसुन्दरी कथा

प्रथम दो ग्रन्थों के विषय में सभी विद्वान् एकमत थे, किन्तु तीसरे ग्रन्थ को लेकर उनमें मतभेद था। परन्तु विभिन्न प्रमाणों के आधार पर कालान्तर में 'अवन्तिसुन्दरीकथा' को दण्डी की तृतीय रचना के रूप संस्कृत साहित्य जगत् में सम्मान प्रदान किया गया।

विश्रुतचरितम् (1-15 परिच्छेद तक)

दशकुमारचरितम् दण्डी का प्रसिद्ध गद्य काव्य है। ग्रन्थ सरलता, सरसता तथा कौतूहलपूर्णता के लिए विशेष रूप से विख्यात् है। यह तो इसके नाम से ही प्रकट है कि इसमे दशकुमारों के चरित का संकलन किया गया है। इसका वर्तमान उपलब्ध स्वरूप तीन भागों में विभक्त है–1.पूर्वपीठिका–इसके अन्तर्गत पाँच उच्छवास है। 2. उत्तरपीठिका, 3.इन दोनों के मध्य पुस्तक का मूल भाग है, जिसमें आठ उच्छवासों में आठ कुमारों की कथाएँ वर्णित है। विश्रुत की कथा दशकुमारचरितम् के अष्टमोच्छ्वास में आती है। इसमें विश्रुत शेष कुमारों को अपना यात्रा अनुभव बताता है।

दशकुमारचरितम् में दसकुमारों की कथाओं का वर्णन प्राप्त होता है। मगध देश में पुष्पुर नामक नगर में राजहंस नामक एक महाप्रतापी राजा राज्य करता था। उसकी पत्नी वसुमती अति गुणवती तथा सुन्दर थी। एक बार राजहंस ने मालवराज मानसार पर आक्रमण किया और उसे पराजित कर दिया। मालवराज ने तब शिव की उपासना की और उनसे दिव्यशक्ति का वरदान प्राप्त किया। इसके पश्चात् उसने राजहंस पर आक्रमण कर, उसे परास्त किया तथा उसके राज्य को अपने अधीन कर लिया। राजहंस ने अपने वृद्ध मंत्रियों–धर्मपाल, पदमोद्भव और सितवर्मा तथा अपने परिवार के साथ विन्ध्याटवी में आश्रय लिया। धर्मपाल के सुमन्त्र, सुमित्र और कामपाल, पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव तथा सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा नामक पुत्र हुए। इनमें से कामपाल, रत्नोद्भव तथा सितवर्मा विदेश चले गए। शेष अपने पिताओं की मृत्यु के पश्चात् मन्त्री बन गए। कुछ समय के पश्चात् वसुमती ने राजवाहन नामक पुत्र को जन्म दिया। राजा के मन्त्री भी इसी बीच पुत्रवान् बने। कामपाल, रत्नोद्भव और सत्यवर्मा के पुत्र भी किसी न किसी प्रकार से राजहंस के पास आ गए। राजा के मित्र प्रहारवर्मा के दो पुत्र उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके (राजा राजहंस) पास लाए गए। इन सभी कुमारों की संख्या दस थी।

15.3 विश्रुतचरितम् की कथावस्तु

विश्रुत की कथा दशकुमारचरितम् नामक भाग के अष्टमोच्छ्वास में आती है। इसमें विश्रुत शेष कुमारों को अपना यात्रा अनुभव बताता है।कुमार मन्त्रगुप्त के सम्पूर्ण वृतान्त को सुनकर राजवाहन ने अपने मित्रों के साथ मुस्कुराते हुए मन्त्रगुप्त को अभिवादन करते हुए कहा कि महामुनि का चरित्र अत्यंत विलक्षण है, जिसमें आनन्द को प्रदान करने वाले आपके बुद्धि कौशल का स्वरूप देखा गया है। इसके बाद अनेक शास्त्रों के मर्मज्ञ उस विश्रुत से अपना वृत्तान्त सुनाने को राजवाहन ने कहा। विश्रुत ने अपना वृत्तान्त राजवाहन को सुनाते हुए बोला कि हे महाराज! मेरे द्वारा भी घूमते–घूमते विन्ध्यांचल के वन में भूख तथा प्यास से पीड़ित, कष्टों को सहन करने में असमर्थ, किसी कुएँ के समीप लगभग आठ वर्ष का एक बालक देखा गया।' (मुझे देखकर) भयभीत वह (बालक) गद्गद् (रूँधे हुए) स्वर में बोला–'हे महाभाग! आर्य (पूज्य), कष्ट में पड़े हुए मुझ (बालक) की (आपके द्वारा) सहायता की जाय। प्राणों का अपहरण करने वाली प्यास को दूर करने के निमित्त पानी को निकालने (खींचते हुए) एक वृद्ध (पुरुष), जो कि मेरा एक मात्र सहारा था, इसी कुएँ में गिर गया है। उसको (इस कुँए से बाहर) निकालने में मैं समर्थ नहीं हूँ।' इसके अनन्तर मैंने समीप जाकर कुछ लताओं को एकत्र करके उनकी (सहायता से) उस वृद्ध को (कुएँ से) बाहर निकाल कर, बाँस की नली से निकाले हुए जल (तथा) बाण फेकने से जितना ऊँचा जा सकता है, उतने ऊँचे बड़हर के वृक्ष की चोटी से, पत्थर से (पत्थर मारकर) गिराए हुए पाँच छः फलों से, उस बालक की प्राण वृत्ति लौटाकर (उस बालक को होश में

लाकर), वृक्ष के नीचे बैठकर उस वृद्ध से कहा –हे माननीय! यह लड़का कौन है? तथा यह विपत्ति कैसे आ पड़ी?

वृद्ध ने कहा–'महाशय! विदर्भ देश में पुण्यवर्मा नामक एक सर्वगुणसम्पन्न राजा था। उसके मरने के उपरान्त उसका पुत्र अनन्तवर्मा राजगद्दी पर बैठा। वह कला में प्रवीण होने पर भी राजनीति में कुशल नहीं था। दिन–रात विलासिता में निमग्न रहता था। इसलिए उसके मुख्यमंत्री वसुरक्षित ने उसे एक दिन राजनीति का ज्ञान प्राप्त करने के लिए एकान्त में बहुत उपदेश दिया। उसने मन्त्री की बात मान ली, किन्तु अपने अन्तःपुर में रानियों के समक्ष मन्त्री के उपदेश की चर्चा कर दी। वहाँ विहारभद्र नामक उसके एक महास्वार्थी सेवक ने छिपकर उसकी सब बातें सुन ली। उसने आकर अनन्तवर्मा के सामने बड़ी नम्रता से राजनीति का खण्डन करते हुए, राजा को यथेच्च भोगपरायण होने की सलाह की। कामी राजा पर उसकी चिकनी–चुपड़ी बातों का असर पड़ गया। फिर क्या था, अनन्तवर्मा मन्त्री की अवहेलना करके भोगासक्त हो गया।अनन्तर अश्मक देश के अधिपति वसन्तभानु ने अपने मन्त्री के पुत्र चन्द्रपालित को बहुत से गुप्तचरों तथा सुन्दरी स्त्रियों के साथ अनन्तवर्मा के पास भेज दिया। चन्द्रपालित ने ऐसा माया जाल फैलाया कि अनन्तवर्मा बुरी तरह उसके चक्कर में फँसकर महादुर्व्यसनी हो गया। उसके देखा–देखी नौकर–चाकर, प्रमुख अधिकारी, सामन्त आदि सब के सब कुमार्ग पर चलने लगे। अवसर पाकर अश्मकपति ने अनन्तवर्मा पर आक्रमण कर दिया, जिसमें वह मारा गया।

इस बीच वसुरक्षित कुछ पुराने सेवकों के साथ अनन्तवर्मा के पुत्र इस बालक को और उसकी बड़ी बहन मंजुवादिनी को इनकी माता वसुन्धरा समेत लेकर भाग निकले। दाहज्वर होने के कारण वसुरक्षित मार्ग ही में मर गये। तब सेवकों ने महारानी वसुन्धरा को पुत्र–पुत्री सहित अनन्तवर्मा के सौतेले भाई मित्रवर्मा के पास माहिष्मती नगरी में पहुँचा दिया। मित्रवर्मा दुष्ट है। वह महारानी के पुत्र को मारकर उनके साथ अनुचित सम्बन्ध स्थापित करना चाहता था इसलिए महारानी मुझे लेकर भागकर यहाँ आ पहुँची। इसके लिए जल निकालने के समय कुएँ में गिर पड़ा। जिस पर आपने अनुग्रह किया। मेरा नाम नालीजंघ है। अब आप ही इस बालक के रक्षक हैं।

तदुपरान्त भास्करवर्मा की माता के सम्बन्ध में पूछने पर नालीजंघ ने कहा–पाटलिपुत्र के व्यापारी वैश्रवण की पुत्री सागरदत्ता में कोसलेन्द्र कुसुमधन्वा से इस कुमार की माता का जन्म हुआ है। यदि ऐसी बात है तो इसकी माता और मेरे पिता के एक ही मातामह है। यह कहकर मैंने उसका सस्नेह आलिंगन किया। उसी समय दैवात् वहाँ आये हुए एक बहेलिये के बाण से मैंने एक हरिण को मारकर आग में पकाकर उन दोनों की तथा अपनी क्षुधा शान्त की। उसी बहेलिये से हमें ज्ञात हुआ कि माहिष्मती में मित्रवर्मा मंजुवादिनी का विवाह प्रचण्डवर्मा से करने की तैयारी कर रहा है। तब मैंने नालीजंघ से कहा–तुम महारानी के पास जाकर एकान्त में उनसे मेरा समाचार बताकर कहना कि 'बालक को बाघ खा गया' ऐसी घोषणा करके आप रोना–पीटना शुरु कर दीजिए। इस पर मित्रवर्मा जब आपकों साँत्वना देने के लिए आये तब आप कहे कि यदि मै पतिव्रता हूँ तो यह माला तुम्हारे लिए तलवार का प्रहार हो जाय। यह कहकर वत्सनाभ नामक विष के साथ जल में डुबोई गई एक माला उसके ऊपर फेंक दे। वह उससे मर जाएगा। तब उस माला को इस औषधि के साथ पुनः जल में डुबोकर अपनी पुत्री को पहना दें। पुत्री नहीं मरेगी। इस घटना से प्रजा आपको पतिव्रता मानकर आप पर बड़ी श्रद्धा करेगी। तब आप प्रचण्डवर्मा को संदेश कहलावे कि वह आकर मंजुवादिनी के साथ पूरा राज्य ले ले। उस समय मैं और राजकुमार भास्करवर्मा

कापालिक साधु के वेश में वहीं श्मशान में निवास करेंगे। पुनः आप (महारानी) नगर के प्रतिष्ठित लोगों से कहें कि विन्ध्यवासिनी देवी ने मुझसे स्वप्न में कहा है–आज से चौथे दिन प्रचण्डवर्मा मर जाएगा। पाँचवें दिन नर्मदा तटवर्ती मेरे मन्दिर में तुम्हारे पुत्र के साथ एक ब्राह्मण कुमार प्रकट होगा। वह इस राज्य का पालन करता हुआ तुम्हारे पुत्र को राजगद्दी पर बैठायेगा। उसके बाद तुम मंजुवादिनी का विवाह उसी ब्राह्मणकुमार के साथ कर देना।

मैंने नालीजंघ से जो योजना बतायी, उसको पूर्णरूप से कार्यान्वित किया गया। मैं और राजकुमार कापालिक वेश में वहीं पहुँच गये। महारानी से भिक्षा लेकर जाते समय नालीजंघ से पूछने पर पता चला कि प्रचण्डवर्मा इस समय राजसभागृह में विद्यमान है। मैं चारण के वेश में प्रचण्डवर्मा के पास पहुँचकर नाना प्रकार के खेलों में उसका मनोरंजन करने लगा। दिनान्त के समय खेल ही खेल में छुरी से उस पर प्रहार करके भाग निकला। आधी रात के समय महारानी का एक नौकर यथानिर्दिष्ट दुर्गादेवी के मन्दिर में कीमती वस्त्र एवं आभूषण रखकर चला गया। मैं और राजकुमार उसी मन्दिर में प्रतिमा के पास एक बिल बनाकर बिल के मुँह पर पत्थर रखकर छिपे हुए थे। उन वस्त्र–आभूषणों को पहनकर हम दोनों उसी बिल के घुस गए। दूसरे दिन प्रातःकाल महारानी मंत्रियों तथा सामन्तों के साथ दुर्गा मन्दिर में आयी। पूजन करने के उपरान्त किवाड़ सटाकर मन्दिर के प्रांगण में सब लोग हाथ जोड़कर खड़े हो गये तथा संकेतानुसार नगाड़ा बजाया जाने लगा। नगाड़े का शब्द सुनकर हम दोनों बिल से बाहर निकलकर लोगों के सामने आये। मैंने सबको सम्बोधित किया–'विन्ध्यवासिनी देवी मेरे द्वारा आप लोगों को आदेश देती हैं कि मैंने व्याघ्री का रूप धारण करके कुमार की रक्षा की। आज से इसे मेरा पुत्र समझो। इसे राजसिंहासन पर बैठाया जाय। इसकी रक्षा के लिए मैंने इस ब्राह्मण कुमार को नियुक्त किया है। इस ब्राह्मण कुमार के साथ मंजुवादिनी का विवाह कर दिया जाय।

यह सुनकर सभी लोग विस्मित एवं प्रमुदित हुए। उसी दिन राजकुमार को राजसिंहासन पर बैठाया गया। मंजुवादिनी का विवाह मेरे साथ हुआ। मैं राज्य–पालन करता हुआ राजकुमार को राजनीति की शिक्षा देने लगा।

अनन्तर मैंने गुप्तचरों द्वारा वसन्तभानु की प्रजाओं में बुद्धिभेद उत्पन्न करके उसको विनष्ट कर विदर्भ देश का पैतृक राज्य भी राजकुमार को प्राप्त करा दिया। कुछ दिनों के उपरान्त अपनी पत्नी मंजुवादिनी को माता के पास छोड़कर आपको ढूँढता हुआ यहाँ आने पर आपके दर्शन से कृतकृत्य हुआ। विश्रुत जानता था कि कुशल सहायकों के बिना राज्यसंचालन सम्भव नहीं। अतः वह नालीजङ्घ के माध्यम से मित्रवर्मा के अमात्य आर्यकेतु, जो कि रानी वसुन्धरा के समान कोसलवंश का था, के मन के भावों को जानने का प्रयास करता है। उसे अपने अनुकूल जानकर अपना सहायक बना लिया। उसकी सहायता से सुचारु रूप से राजकीय कार्यों का निर्बाह करने लगा।

15.4 विश्रुतचरितम् में पात्र–चित्रण

दण्डी का पात्र–चित्रण विशद है। उनका रचना–कौशल दर्शनीय हैं। रोचकता के लिए इसमें हास्य का पुट भी दिया गया हैं। कथाओं के क्रम में अवरोध नहीं है। व्याकरण और भाषा की दृष्टि से दण्डी को संस्कृत गद्यशैली का आचार्य माना जाता है। उन्होंने अपने वर्णनों में सरल और मनोरम वैदर्भी रीति को अपनाया है। छोटे–छोटे वाक्य, अर्थ की स्पष्टता, सुन्दर शब्द–विन्यास, मौलिक कल्पनाएँ आदि उनकी शैली की प्रमुख विशेषताएँ है।

15.4.1 पुण्यवर्मा

विदर्भ नाम का जनपद देश है उसमें भोजवंश का भूषण राजा पुण्यवर्मा रहता था जो पवित्र कीर्ति वाला अर्थात् उसका यश गुणों के कारण सर्वत्र व्याप्त था। वह विद्वान्, महाशक्तिशाली, बन्धु–बान्धवों तथा सेवकों पर कृपा करने वाला, प्रजापालक, मनु स्मृति के प्रणेता महाराज मनु के द्वारा बताए गये मार्ग पर चलने वाला और प्रजा जनों से भी मनु प्रतिपादिक नियम का पालन कराने वाला, उदार ,दानी तथा सम्पूर्ण मानवीय सद्गुणों से सम्पन्न था। वह शास्त्र को प्रमाण मानने वाला, जो काम अपने से हो सके, सामान्य जनता के लिए हितकर हो तथा न्याय युक्त हो ऐसे कामों को करने वाला, विद्वानों का सम्मान करने वाला, सेवकों पर प्रभाव रखने वाला, भाई–बन्धुओं को ऊँचा उठाने वाला, शत्रुओं का दमन करने वाला, जिन बातों से अपना कोई प्रयोजन न हो उनको न सुनने वाला, गुणों से कभी भी तृप्त न होने वाला, कलाओं में अत्यधिक निपुण, धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र के अत्यधिक निकट रहने वाला, थोड़ी सी भी उसकी भलाई की जाने पर प्रचुर–प्रत्युपकार करने वाला, कोश तथा वाहन की देखरेख करने वाला, अपने सभी कार्याध्यक्षों पर सावधानी पूर्वक दृष्टि रखने वाला, अनुरूप पुरस्कार तथा सम्मान द्वारा कार्यकर्त्ताओं का उत्साह बढ़ाने वाला, दैवीय तथा मानुषी आपत्तियों को तुरन्त ही शान्त अथवा दूर करने वाला, छः गुणों (सन्धि विग्रह, यान, आसन, आश्रय तथा द्वैधीभाव) का विधिवत् पालन करने में निपुण, मनु द्वारा बतलाये गये चातुर्वर्ण्य (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) के धर्मों के पालन कराने वाला, पवित्र यश वाला था।

15.4.2 अनन्तवर्मा

अनन्तवर्मा पुण्यवर्मा का पुत्र था वह राजनीति से सर्वथा विमुख रहने वाला था। उसकी इस विमुखता का और भोग विलासों के प्रति उसकी आसक्ति का लाभ उठाकर अश्मकराज वसन्तभानु, जो कि विदर्भ शासन के अधीन रहने वाला एक सामन्त था। राजा अनन्तवर्मा जिस–जिस व्यसन को प्रारम्भ करता वह उसका गुण रूप में वर्णन करता था। वह किसी के दोष को जानने के लिए प्रयत्न नहीं करता था। विभिन्न विभागों के अध्यक्ष इस स्थिति का लाभ उठाने लगे। वे कर आदि से प्राप्त धनों को राजकीय कोश में जमा न कराकर, स्वयं उनका उपभोग करने लगे। इस प्रकार धीरे–धीरे आय के सभी द्वार नष्ट हो गए।

स्वामी धूर्तजनों के वश में रहने वाला था, अतः व्यय के विभिन्न मार्ग प्रतिदिन बढ़ने लगे। सामन्त, नगर एवं जनपदों के प्रमुख अधिकारी आदि सभी राजा के समान आचरण करने वाले थे अतः राजा अनन्वर्मा उन्हें उनकी पत्नियों सहित मद्यपान आदि की सभाओं में बुलाने लगा। उन सभाओं में सभी अपनी–अपनी मर्यादाओं को भूलकर यथेच्छ व्यवहार करते थे। राजा भी अनेक बहानों से उनकी पत्नियों के साथ दुराचार करता था। राजा की स्त्रियों में किसी भी प्रकार का भय लगभग समाप्त हो चुका था। अतः दूषित चरित्रवाली स्त्रियाँ स्वामी से भिन्न पुरुषों से सम्बन्ध स्थापित करने में किसी भी प्रकार का संकोच अनुभव नहीं करती थी। सामन्त इत्यादि भी निर्भयी होकर उनके साथ सुखपूर्वक रहते थे। सभी कुलीन स्त्रियाँ लम्पट पुरुषों में रुचि रखने वाली बन गई थीं। इस कारण से उनकी अवहेलना कर जारगणों की बातों को ही सुनती थीं। जिन घरों में स्वामी अपनी स्त्रियों के इस दुराचार को सहन नहीं कर पा रहे थे, उनके घरों में इस बात को लेकर विवाद होने लगे। उसके राज्य में शासन नाम की कोई व्यवस्था नहीं रह गई थी। बलवान् दुर्बलों को मारने लगे थे। पौर आदि धनवानों

के धनों को चुराने लगे। किसी के मन में दण्ड का भय नहीं रह गया था। अतः पापकर्म के अनेक मार्ग प्रचलित हो गए थे। बन्धुओं के वध, धन के छिन्न भिन्न हो जाने, वध तथा कारावास आदि से त्रस्त प्रजा गला फाड़–फाड़कर रोने लगीं। राजा से अपेक्षा की जाती है कि वह दण्ड–प्रयोग में यम की भाँति व्यवहार करे और देश–काल, आयु, स्थान, लिङ्ग और अपराध के प्रकृति आदि को देखते हुए दण्ड का प्रयोग करें। परन्तु अनन्तवर्मा बिना सोचे–समझे दण्ड का प्रयोग करने लगा था। उसके इस प्रकार के व्यवहार से प्रजा में भय और क्रोध व्याप्त हो गया। धनाभाव से ग्रस्त परिवार लोभग्रस्त होने लगे थे। राजा के व्यवहार से अपमानित तेजस्वी लोग प्रतीकार की भावना से कार्य करने लगे थे।

15.4.3 नालीजङ्घ

नालीजङ्घ प्रधान पात्र न होते हुए भी विश्रुतचरितम् का अभिन्न अङ्ग है। वह एक निष्ठावान् एवं सद्विचारों वाला सेवक था। वसुरक्षित की मार्ग में ही अकाल मृत्यु हो जाने पर वही अन्य विश्वस्त पुरुषों के साथ मिलकर देवी वसुन्धरा तथा उसके बच्चों को मित्रवर्मा के पास सुरक्षित पहुँचाता है। रानी वसुन्धरा को उस पर अगाध विश्वास था। मित्रवर्मा से अपने पुत्र को बचाने के लिए वह नालीजङ्घ के साथ उसे राजमहल से बाहर गुप्त रूप से भेज देती है और कहती है कि यहाँ से कहीं दूर जाकर सावधानी पूर्वक रहो। नालीजङ्घ रानी वसुन्धरा के विश्वास की रक्षा करता है और बालक भास्करवर्मा को लेकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर उसके प्राणों की रक्षा के निमित्त भटकता रहता है। इसी प्रक्रिया में वह विन्ध्याट्वी के वन में भास्करवर्मा की प्यास बुझाने के लिए जल निकालता हुआ कुएँ में गिर पड़ता है। विश्रुत उसे कुएँ से निकालता है और उन दोनों की क्षुधातृप्ति की व्यवस्था कर नालीजङ्घ से भास्कर वर्मा के विषय में पूछता है। सम्पूर्ण वृत्तान्त को सुनाकर नालीजङ्घ उससे कहता है कि आज से तुम्हीं इस अनाथ बालक के रक्षक हो।

मन में सहज ही यह प्रश्न उठता है कि एक अपरिचित व्यक्ति पर इतना अधिक विश्वास करने का क्या कारण था? इसका कारण यह हो सकता है कि वृद्ध व्यक्तियों की दृष्टि पारखी होती है। निस्सन्देह, विश्रुत के व्यवहार से नालीजङ्घ के मन में उसके प्रति अटूट विश्वास उत्पन्न हुआ होगा। अस्तु, विश्रुत ने अश्मकराज को नष्ट कर, भास्करवर्मा को पिता के पद पर प्रतिष्ठित करने की जो योजना बनाई थी, उसे वह नालीजङ्घ की सहायता से ही कार्यान्वित कर पाया। मित्रवर्मा की मृत्यु के बाद उसके अमात्य आर्यकेतु के मनोभावों को जानने और उसे अपने पक्ष में करने के लिए विश्रुत ने नालीजङ्घ की ही सहायता ली।

15.4.4 मंत्री वसुरक्षित

वसुरक्षित अनन्तवर्मा का आमात्य था। वह उसके पिता के समय से मन्त्री के रूप में कार्य कर रहा था। अतः उसके मन में राजा तथा राज्य के प्रति स्वाभाविक निष्ठा थी। अनन्तवर्मा की लेशमात्र भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वह सदा नृत्य, गीत, चित्रकर्म मद्यपान आदि में ही रत रहता था। वसुरक्षित एक प्रभावशाली वक्ता (प्रगल्लभ वाक्) था। मर्यादा का पालन करने वाला था। यद्यपि आयु में वह ज्येष्ठ था, परन्तु पद की दृष्टि से अनन्तवर्मा का स्थान ऊँचा था। अतः राज्य के हित की कामना से जब वह अनन्तवर्मा को उपदेश देने का निश्चय करता है, तो वह अपेक्षित मर्यादा का पालन करता है। उदाहरणस्वरूप वह उसे सबके सामने कुछ न कहकर एकान्त में उपदेश

देता है। अनन्तवर्मा आयु में मंत्री वसुरक्षित से छोटा है तथा उसके स्वामी पुण्यवर्मा का पुत्र है, अततः उसे स्नेहवश 'तात' कहकर सम्बोधित करता है। किसी को भी उपदेश देते समय, पहले उसके गुणों की प्रशंसा करना उपदेशक के प्रयोजन को सफल बनाता है। वसुरक्षित चाहता था कि अनन्तवर्मा राजनीति के महत्त्व को समझे और उसकी बातों का आत्मसात् करे इसलिए वह पहले उसके विद्यमान गुणों और उसकी रुचियों की प्रशंसा करता है फिर वह बड़ी चतुराई से विनम्र शब्दों में राजनीति सम्बन्धी उसकी न्यूनता का बोध कराता है। वह कहता है कि सभी कलाओं में निपुण होने पर भी आप की बुद्धि अग्नि में न तपाये गए सोने के समान अत्यधिक सुशोभित नहीं होती। राजनीति का ज्ञान रखने वाला राजा सदा सफल रहता है किन्तु उसके ज्ञान से रहित राजा चाहे कितना ही महान् क्यों न हो, वह जान नहीं पाता कि शत्रु किस प्रकार उसे अभिभूत करता जा रहा है। फलस्वरूप वह समय रहते प्रतीकार नहीं कर पाता। न ही वह साध्य और साधन का विभाजन कर सम्यक् रूप से व्यवहार कर पाता है। यानी वह निश्चय ही नहीं कर पाता कि उसका लक्ष्य क्या है और उसकी प्राप्ति कैसे हो सकती है अथवा वह यह नहीं जान पाता कि कौन उसके विरुद्ध है और कौन उसके साथ है। शास्त्रविरुद्ध व्यवहार करने वाले को उसके कार्यों में बाधाएँ आती हैं और वह अपने तथा पराये के द्वारा अपमानित होता है। इस प्रकार तिरस्कृत होने वाला राजा प्रजा के हित के लिए कोई आज्ञा भी देता है, तो उसका कोई पालन नहीं करता। इस प्रकार प्रजा का योगक्षेम सिद्ध नहीं होता। राजा की आज्ञा न मानने वाली प्रजा स्वेच्छानुसार व्यवहार करते हुए सभी मर्यादाओं को दूषित कर देती है। यानी राजा प्रजा दोनों इस लोक में तो कष्ट और अपयश के भागी बनते ही हैं, परलोक में भी कोई सुख प्राप्त नहीं होता।

वसुरक्षित राजा से कहता है कि शास्त्ररूपी दीपक से देखे गए मार्ग से लोकयात्रा सुगम हो जाती है। राजनीति शास्त्र का ज्ञान राजा के लिए दिव्य चक्षु के समान है, जो बिना किसी बाधा के भूत, वर्तमान और भविष्य के गुप्त और परोक्ष विषयों को ग्रहण करने में समर्थ है। जो दिव्यचक्षु से रहित है अर्थात् जो राजनीति के ज्ञान से शून्य है, वह राजा विशाल और लम्बी आँखों के होते हुए भी नेत्रहीन के समान होता है। यानी जिस प्रकार एक नेत्रहीन व्यक्ति संसार में ठोकरें खाता है, उसी प्रकार राजनीति की गूढ़ बातों को न समझ पाने के कारण राजा अपने राज्य को सुचारु रूप से चलाने में स्वयं को असमर्थ पाता है।

इस प्रकार संक्षेप में राजा को राजनीतिक ज्ञान की आवश्यकता के विषय में बताकर वसुरक्षित राजा से अनुरोध करता है कि वह एक राजा के लिए बाह्य विषयों—नृत्य, गीत, वाद्य आदि से अपनी आसक्ति को हटाकर राजनीति में रुचि ले, क्योंकि वही उसकी कुल विद्या है। दण्डनीति का ज्ञान प्राप्त करने से और तदानुसार व्यवहार करने से उसकी शक्तियों में वृद्धि होगी। तब कोई भी उसकी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं करेगा और समुद्ररूपी मेखला वाली पृथिवी पर उसका एकछत्र राज्य होगा। राजा अनन्तवर्मा अपने वृद्ध मंत्री वसुरक्षित की बातों से सहमत होता है और वह कहता है कि गुरुतुल्य आपके द्वारा सम्यक् उपदेश दिया गया है। आज से मैं आपके उपदेश के अनुसार ही व्यवहार करूँगा।

15.4.5 सेवक विहारभद्र

विहारभद्र राजा के बाल्यकाल से ही उसका सेवक था। वह मन के भावों को जानने में कुशल तथा राजा का कृपापात्र था। नृत्य, गीत और वादन आदि में अत्यधिक निपुण

था। परस्त्रियों में रुचि रखने वाला था। वह चतुर और मुँहफट था। अनेक प्रकार के वक्र भाषणों में प्रवीण था। वह दूसरे के दोषों को ढूँढने में तत्पर, हँसाने वाला, परनिन्दा में आनन्दित होने वाला और दूसरों की चुगली करने में निपुण था। मन्त्रिमण्डल से भी घूस लेने वाला था। सारे दुष्टकर्मों का आचार्य और कामशास्त्री नौका का कर्णधार था। वसुरक्षित के चले जाने के बाद उसके साथ हुए वार्तालाप को जब राजा अनन्तवर्मा अन्तःपुर की स्त्रियों को बता रहा था, तो पास में बैठा हुआ विहारभद्र सारी बात सुन लेता है। वह परजीवी प्रकृति का पुरुष था। उसे चिन्ता होती है कि यदि राजा भोग–विलासों को छोड़कर राजनीति में रुचि लेने लगेगा, तो उसका क्या होगा? स्वार्थ से वशीभूत होकर वह राजा को विपरीत शिक्षा देने लगता है।

वह कहता है कि हे देव, यदि दैवकृपा से कोई ऐश्वर्य का पात्र बनता है तो धूर्त जन अनेक प्रकार के प्रलोभनों से दुःखी करते हुए अपने प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं। जैसे–कुछ व्यक्ति मरने के बाद प्राप्त होने वाले विशिष्ट अभ्युदय की आशा मन में उत्पन्न कर, सिर को मुण्डवाकर, कुश की रस्सी से बाँधकर, मृगचर्म पहनाकर, मक्खन से मालिश कर, बिना भोजन के सुलाकर उसकी सारी सम्पत्ति हस्तगत कर लेते हैं। कुछ क्रूर पाखण्डी उनसे भी बढ़कर होते हैं। वे तो व्यक्ति से उसके पुत्र, पत्नी, शरीर और यहाँ तक कि प्राणों को भी छुड़वा देते हैं। यदि कोई बुद्धिमान् व्यक्ति इस मृगतृष्णा के लिए अपनी सम्पति का परित्याग नहीं करना चाहता तो अन्य धूर्तगण उसे घेर लेते हैं, उससे कहते है कि यदि हमारे द्वारा बताए हुए मार्ग पर चला जाय तो हम एक कौड़ी को एक लाख कार्षापण में बदल दें। बिना शस्त्र के सारे शत्रुओं को मरवा दें। एक अकेले व्यक्ति को भी चक्रवर्ती सम्राट बनवा दें। इस प्रकार अपनी चतुराई से वह उसे वशीभूत कर लेते हैं। विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि यदि उस धूर्त पाखण्डी की इन बड़ी–बड़ी लुभावनी बातों पर विश्वास करके कोई यह पूछता है कि आपका यह कौन–सा रास्ता है? तो उसको स्पष्ट करते हुए कहता है कि चार राज विद्याएँ है–त्रयी (तीनों वेद), वार्ता (कृषि और वाणिज्य से सम्बन्धित ज्ञान), आन्वीक्षिकी (तर्कशास्त्र) और दण्डनीति (अर्थशास्त्र)। उनमें से प्रथम तीनों बहुत विस्तृत और अल्पफलप्रदायिनी हैं। इसलिए उन्हें छोड़कर केवल दण्डनीति का ही अध्ययन करना चाहिए। आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए राजनीति के सभी सिद्धांतो को छह हजार श्लोकों में संक्षिप्त कर दिया है। इसको पढ़कर और तदनुसार व्यवहार करने से उपर्युक्त सभी कार्यों की सिद्धि होती है। इस प्रकार विहारभद्र अनन्तवर्मा को चार प्रकार के राजविद्याओं और आचार्य चाणक्य द्वारा चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए षट्सहस्र श्लोकों में प्रणीत शास्त्र को पालन करने हेतु निषिद्ध बताकर उसे अनुचित एवं कुमार्गगामी बातों को कहता है।

वह भी उनकी आज्ञा मानकर उस शास्त्र को पढ़ता है और सुनता है। उसको पढ़ते हुए ही वह किस अवस्था को प्राप्त हो जाता है। इतना ही नहीं इस शास्त्र को समझने के लिए अन्य सम्बद्ध वाक्यों का अध्ययन भी आवश्यक हो जाता है। राजनीति शास्त्र को पढ़ने से व्यक्ति का चिन्तन किस प्रकार प्रभावित होता है, इसका वर्णन करते हुए विहारभद्र कहता है कि इस शास्त्र को जानने वाला सर्वप्रथम अपनी पत्नी और पुत्र पर ही अविश्वास करने लगता है। अपनी उदरपूर्ति के लिए भी वह, इतने चावलों से इतना भात बनेगा और इतने भात को पकाने में इतना ईंधन लगेगा, इस प्रकार से गणना करने लगता है।

जागने के पश्चात् राजा धुले अथवा बिना धुले मुख से एक या आधा मुट्ठी अन्न पेट के अन्दर डालकर नगर (मुष्टि) और गाँव (अर्द्धमुष्टि) के आय की पड़ताल करके

समस्त आय और व्यय को दिन के पहले आठवें भाग में सुनता है। उसके सुनते हुए ही धूर्त अध्यक्ष गण दुगना धन हड़प कर लेते हैं। चाणक्य ने धनसंग्रह के चालीस उपाय बतलाए हैं, लेकिन वे धूर्त उन चालीस उपायों को हजारों प्रकार का बना लेते हैं। इस प्रकार वे राजा को ठगते है।

प्रजाजनों के रोज–रोज के झगड़े और एक दूसरे पर आरोप लगाकर चिल्लाना आदि को सुन–सुनकर राजा के कान मानो जल जाते है, जिसके कारण उसे बहुत कष्ट होता है। न्यायालय में राजा के साथ प्राड् नामक अधिकारी बैठते थे, जो वादी–प्रतिवादी से प्रश्न पूछकर फैसला देते। इन्हीं के फैसलों को राजा मान्यता देता था, परन्तु ये अधिकारी धन आदि लेकर अपनी इच्छा से किसी भी व्यक्ति के पक्ष में फैसला कर देते थे, लेकिन बदनामी राजा की होती थी। ये अधिकारी जिसे चाहते उसकी जीत करवा देते। राजा को कार्यों एवं योजनाओं के विषय में कर्मचारी उलटा–पुलटा समझाते थे अर्थात् जो हानिप्रद होता था, उसे लाभप्रद समझाते थे। राजा भोजन करने के बाद जब तक वह पच नहीं जाता था, उसे किसी के द्वारा भोजन में विष दिये जाने की आंशका बनी रहती थी–

यानैः शय्यासने पाने भोज्ये वस्त्रे विभूषणे।
सर्वत्रैवाप्रमत्तः स्याद् वर्जयेद् विषदूषितम्।।

इस प्रकार धूर्त अधिकारीगण येन–केन प्रकारेण राजा को अपने वश में किये ही रहते थे।

तीसरें आठवें भाग में राजा को स्नान एवं भोजन के लिए समय प्राप्त होता है। जब तक भोजन पूरी तरह पचता नहीं है, वह विष के भय से ग्रस्त रहता है।

चौथे आठवें भाग में सुवर्ण के लिए हाथ फैलाता हुआ ही उठ खड़ा होता है। पाँचवें अष्टम भाग में राजनीति सम्बन्धी मन्त्रणा से महान् कष्ट का अनुभव करता है। यहाँ भी मन्त्रीगण ऊपर से तो तटस्थ बने रहते हैं, किन्तु वस्तुतः एक दूसरे से मिले हुए होकर अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए दोषों और गुणों को, दूतों और गुप्तचरों के सन्देशों को, सम्भव और असम्भव को तथा स्थान, समय और कार्य की स्थितियों को अपनी इच्छा से बदलते हुए अपने राज्य के और शत्रुपक्ष के मित्रवर्ग से धन प्राप्त करते हैं। अपने राज्य में और सीमा पर गुप्तरूप से विवादों को उत्पन्न करके प्रकट रूप में उनको शान्त सा करते हुए स्वामी को वश में कर लेते हैं। छठा–आठवा भाग इच्छानुसार मनोविनोद अथवा मन्त्रणा के लिए निश्चित होता है। इतना ही समय उसे विनोद के लिए प्राप्त होता है। सातवें भाग में उसे अपनी चार अंगों वाली सेना के निरीक्षण का कष्ट उठाना पड़ता है। आठवें में इसे सेनापति के साथ पराक्रम सम्बन्धी चिन्ता का दुःख होता है।

विहारभद्र अपनी चिकनी–चुपड़ी बातों के माध्यम से शास्त्र द्वारा बताये गये राजा के प्रतिदिन एवं प्रतिरात्रि के आठों प्रहरों के कार्य को स्पष्ट करते हुए उसे न पालन करने हेतु प्रेरित करता है।

दिन के समान रात्रि के भी आठ भाग माने गए हैं। उनके शास्त्रकारों द्वारा राजा के लिए निर्धारित किए गए क्रिया–कलापों का वर्णन विहारभद्र राजा से करता है। वह कहता है कि शास्त्रज्ञों के अनुसार रात्रि के प्रथम (आठवें) भाग में गुप्तचरों से मिलना चाहिए और उनके माध्यम से अत्यन्त क्रूर, शस्त्र, अग्नि और विष का प्रयोग करने वाले लोगों को नियुक्त करना चाहिए। दूसरे भाग में भोजन के पश्चात् वेदपाठी ब्राह्मण के

समान शास्त्र का स्वाध्याय करना चाहिए। तीसरे भाग में तूर्यघोष के साथ सोया हुआ चौथे और पाँचवें (भागों) में सोए।

एक राजा की स्थिति पर दुःख प्रकट करता हुआ विहारभद्र कहता है कि निरन्तर चिन्ता के कष्ट से व्याकुल मन वाले इस बेचारे को निद्रासुख कैसे मिल सकता हैं। फिर रात्रि के छठे भाग में शास्त्र और कर्तव्य की चिन्ता प्रारम्भ हो जाती है। सातवें भाग में मन्त्रचिन्तन और दूतों को भेजने का कार्य होता है और दूत जो हैं वह दोनों पक्षों से मधुर और अनुकूल बातें कर धन प्राप्त करता है। उस धन को वह शुल्क की बाधा से रहित मार्गों पर व्यापार के द्वारा बढ़ाता हुआ अविद्यमान कार्य को भी अल्प प्रयास से उत्पन्न करके बढ़ाते रहते हैं। रात्रि के आठवें भाग में पुरोहित आदि उसके पास आकर कहते हैं कि आज बुरा स्वप्न देखा है। ग्रहों की स्थिति प्रतिकूल है। शकुन बुरे हैं। इसके लिए शान्तिकर्म करना चाहिए। इसमें सभी पात्र यदि सोने के हों तो परिणाम अत्यन्त उत्तम होगा।

विहारभद्र सेवक होते हुए राजा अनन्तवर्मा से यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में बताता है एवं शास्त्र से क्या प्रयोजन है अर्थात् शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है ,इसलिए अत्यधिक कष्टों (बाधाओं) का परित्याग कर अपनी इच्छा के अनुसार सुखों का भोग कीजिए। उस यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में वे राजा से कहते हैं कि ये ब्रह्मा के समान हैं। इनके द्वारा किया गया स्वस्ति पाठ अत्यधिक कल्याणकारी होता है। ये घोर दरिद्रता से पीड़ित और बहुत अधिक सन्तानों वाले हैं। यज्ञ को करने में इन तेजस्वी ब्राह्मणों ने आज तक किसी से दान नहीं लिया है। इनको दिया गया दान स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला और अनिष्ट का नाश करने वाला होता है। इस प्रकार की बातों से राजा को अभिभूत कर उन ब्राह्मणों को खूब दान–दक्षिणा दिलवाते हैं और गुप्त रूप से उनसे अपना हिस्सा लेते हैं। विहारभद्र अनन्तवर्मा से कहता है कि इस प्रकार दिन–रात थोड़े से भी सुख से रहित और परिश्रम की अधिकता से निरन्तर पीड़ित होकर समय बिताते राजा की चक्रवर्तिता तो रही, अपने राज्य मण्डलमात्र की रक्षा करना भी कठिन हो जाता है। इसका कारण वह बतलाता है कि शास्त्रज्ञों की अनुमति से वह जो कुछ दान देता है, जो भी सम्मान देता है, जो भी प्रिय बोलता है, उसकी उन सभी क्रियाओं को लोग सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार अविश्वास राजलक्ष्मी के अभाव का कारण बनता है। पूर्ण चतुराई से वह राजा को समझाता है कि लोकव्यवहार के लिए जितने ज्ञान की आवश्यकता होती है, उसे तो मनुष्य संसार में स्वयं ही अनुभव से सीख लेता है, इसके लिए शास्त्रों के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं है। एक अबोध शिशु भी विभिन्न उपायों से माता के स्तनपान की अभिलाषा को प्रकट करता है। अतः वह राजा को परामर्श देता है कि वह राजनीति के कारण होने वाले महान् कष्ट को छोड़कर इच्छानुसार इन्द्रियसुखों का भोग करे।

विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि जो भी इन्द्रियों को जीतने, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि अरिषड्वर्ग को त्यागने, अपने और शत्रुपक्ष के लोगों में निरन्तर सामादि उपायों का प्रयोग करने और सन्धि–विग्रह की चिन्ता के द्वारा समय बिताने और थोड़े से भी सुख का अवसर न देने का उपदेश देते हैं, मन्त्रीरूपी उन बगुलों के द्वारा आप से चोरी से अर्जित किया गया धन दासियों के घरों में भोगा जाता है।

राजनीतिशास्त्रकारों का उपहास करते हुए वह कहता है कि राजनीति के क्रूर सिद्धांतो का प्रतिपादन करने वाले ये शुक्र, अङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र आदि बेचारे हैं

कौन? क्या इन्होंने स्वयं अरिषड्वर्ग को जीता था अथवा क्या उन्होंने शास्त्रों के अनुसार व्यवहार किया था। उनके द्वारा भी प्रारम्भ किए गए कार्यों में सफलता और असफलता देखी गई थी। राजनीति के सिद्धांतों को जानने वाले बहुत से लोग, इनके ज्ञान से शून्य लोगों के द्वारा ठगे गए हैं।

पुनः वह अनन्तवर्मा को भोगोन्मुखी बनाये रखने के लिए प्रशंसा करते हुए वह कहता है कि आप सम्पूर्ण लोक में सम्माननीय वंश में उत्पन्न हुए हैं, युवा हैं, सुन्दर शरीर और अपरिमित ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं। इन सबको सारे अविश्वास के हेतु और सुखों के उपभोग में बाधा उत्पन्न करने वाले, अनेक विकल्पों के होने से सभी कार्यों में संशय युक्त तन्त्रावाप (स्व और परराष्ट्र की चिन्ता) के द्वारा व्यर्थ मत कीजिए।

राजा को आश्वस्त करने की दृष्टि से वह कहता है कि आपके पास दस हजार हाथी, तीन लाख घोड़े और असंख्य पैदल सैनिक हैं। आपका कोश स्वर्ण और रत्नों से भरा हुआ है। यह सारा प्राणीलोक अगर हजार युगों तक भी उसका भोग करता रहे तो समाप्त नहीं होगा। फिर वह राजा से कहता है कि मनुष्य का जीवन बहुत छोटा होता है, उससे भी भोग के योग्य आयु (युवावस्था) बहुत कम होती है। वे मूर्ख होते हैं जो आजीवन केवल धन अर्जित करते रहते हैं। उसका भोग करने की लेशमात्र भी इच्छा नहीं करते अर्थात् कहने का आशय यह है कि नीतिशास्त्रकारों के द्वारा प्रणीत सभी नियम अनुचित एवं व्यर्थ है उसका पालन करने से कोई लाभ नहीं होता है बल्कि सदाचारी एवं नियम पालन करने वाला व्यक्ति धूर्त मंत्रियों एवं दरबारियों के द्वारा ढगा जाता है इसलिए हे महाराज! आप भोग विलास करने योग्य चीजों का भोग करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनाइये। इस प्रकार वह राजा को उचित मार्ग से अनुचित मार्ग की तरफ प्रेरित करता हैं।

विहारभद्र राजा को परामर्श देता है कि–हे राजन! अनन्तवर्मा आप भी राज्य के राजनैतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक बातों पर ध्यान न देकर राज्य की रमणीय वस्तुओं का भोग कीजिए अर्थात् वह कहना चाहता है कि वह राज्य का भार विश्वस्त लोगों पर सौंप दे और अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ रमण करते हुए ऋतुओं के अनुसार गीत–संगीत और (मद्य) पान की सभाओं का आयोजन करते हुए सुख का अनुभव करे, यह कहकर वह साष्टांग भूमि पर लेट गया। राजा तथा अन्तःपुर की स्त्रियाँ उसकी इस चेष्टा पर हँस पड़ते है। राजा की प्रकृति ही भोगपरक थी। अतः वह विहारभद्र की बातों को अपने लिए हितकारी मानते हुए उसे अपना गुरु घोषित करता है। वह उसके मतानुसार व्यवहार करते हुए राजनीति तथा वसुरक्षित, दोनों की अवहेलना करते लगता है। इस प्रकार आप राज्य पर किसी भी प्रकार का ध्यान न दीजिए।

विहारभद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश को सुनकर थोड़ी मुस्कुराहट के साथ उसको अपना गुरु मानकर और उसे महत्व देकर जमीन से उठाया और भोग–विलास के रस में डूब गया तथा वृद्ध मंत्री वसुरक्षित का अपमान करने लगा।

15.5 विश्रुतचरितम् का वैशिष्ट्य

दण्डी का दृष्टिकोण यथार्थवादी है। उन्होंने समाज के सभी वर्गों के पात्रों को लिया हैं। इसमें राजा, राजकुमार, ब्राह्मण, भिक्षुक, चोर, राजकुमारियाँ, वेश्याएँ, दम्भी और

पाखंडी सभी सम्मिलित है। दण्डी ने ढूँढ–ढूँढकर सामाजिक बुराइयों का उद्घाटन किया है। दण्डी को स्वच्छ समाज से प्रेम है, दम्भी और पाखण्डियों से नहीं। अतः कामातुर ऋषि मरीचि, कुलटा पत्नी धूमिनी, परस्त्रीरत कलहकण्टक, ऋषिमनोहारिणी काममंजरी, कार्यदक्ष उपहारवर्मा, योग्य अमात्य वसुरक्षित, धूर्ताधिराज विहारभद्र आदि के चरित्र–चित्रण जीवन की वास्तविकता का वर्णन करते है। भले और बुरे सभी कोटि के पात्र है। उनमें मानवोचित हर्ष–शोक, सुख–दुःख, राग–द्वेष, प्रेम–घृणा, आशा–निराशा व्याप्त है।

दण्डी आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी और व्यवहारवादी है। दशकुमारचरित में ईर्ष्या, घृणा, द्वेष, हिंसा, व्यभिचार बलात्कार, अनैतिकता आदि सभी का वर्णन है। इसके वर्णन के द्वारा दण्डी का उद्देश्य है–समाज की बुराइयों का नग्नचित्र प्रस्तुत करके जनता को सावधान करना, दंभी, पांखण्डी, अभिचार रत तथा स्वार्थपरायण व्यक्तियों से सतत जागरुक रहने की शिक्षा देना और स्वस्थ परम्पराओं को आश्रय देना। दण्डी ने केवल सैद्धान्तिक शिक्षा देना और स्वस्थ परम्पराओं को आश्रय देना। दण्डी ने केवल सैद्धान्तिक शिक्षा न देकर व्यावहारिक शिक्षा दी है। व्यवहार कुशलता से ही जीवन सुखी बन सकता है, यह दण्डी का लक्ष्य है। दण्डी को असंयत, अनैतिक आदि कहना तथ्य से परे है। दण्डी निर्भीक सुधारवादी, क्रान्तिकारी और व्यवहार कुशल कवि है।

अष्टम उच्छवास विश्रुतचरितम् में मन्त्री वसुरक्षित ने राजकुमार अनन्तवर्मा को जो उपदेश दिया है, उसकी तुलना बाण के शुकनासोपदेश से की जा सकती है। दण्डी का उपदेश अत्यन्त युक्तियुक्त और प्रभावोत्पादक है।

'तात! सर्वैवात्मसम्पदभिजनात्प्रभृत्यन्यूनैवात्रभवति लक्ष्यते। बुद्धिश्च निसर्गपट्वी, कलासु नृत्यगीतादिषु चित्रेषु च काव्यविस्तरेषु प्राप्तविस्तरा तवेतरेभ्यः प्रतिविशिष्यते। तथाऽप्यसावप्रतिपद्यात्मसंस्कारमर्थशास्त्रेषु, अनग्निसंशोधितेव हेमजातिर्नातिभाति बुद्धिः। बुद्धिहीनो हि भूभृदत्युच्छ्रितोऽपि परेरध्यारुह्यमाणमात्मानं न चेतयते। न च शक्तः साध्यं साधनं वा विभज्य वर्तितुम्। अयथावृत्तश्च कर्मसु प्रतिहन्यमानः स्वैः परैश्च परिभूयते। न चावज्ञातस्याज्ञा प्रभवति प्रजानां योगक्षेमाराधनाय। अतिक्रान्तशासनाश्च प्रजा यत्किंचनवादिन्यो यथाकथांचिद्वर्तिन्यः सर्वाः स्थितः संकिरेयुः। निर्मर्यादश्च लोको लोकादितोऽमुतश्च स्वामिनामात्मानं च भ्रंशयते। आगम दीपदृष्टेन खल्वध्वना सुखेन वर्तते लोकयात्रा। दिव्यं हि चक्षुर्भूतभवद्भविष्यत्सु व्यवहितविप्रकृष्टादिषु च विषयेषु शास्त्रं नामाप्रतिहतवृत्ति। तेन हीनः सतोरप्यायतविशालयोर्लोचनयोरन्ध एव जन्तुरर्थदर्शनेष्वसामर्थ्यात्। अतो विहाय बाह्यविद्यास्वभिषङ्गमागमय दण्डनीतिं कुलविद्यां। तदर्थानुष्ठेन चावर्जितशक्तिसिद्धिरस्खलितशासनः शाधि चिरमुदधिमेखलामुर्वीम्' इति।

हे तात! (प्रियवर)! आप में अपने वंश (खानदान) के अनुरूप सभी संपदाएँ (गुण) अत्यधिक रूप से दिखाइ पड़ती है। नृत्य–गीतादि कलाओं में, चित्र (निर्माण) में तथा शल्य कला में स्वभाव से ही तीक्ष्ण आपकी बुद्धि और लोगों की अपेक्षा अधिक विशिष्ट है तथापि (आपकी बुद्धि) अर्थशास्त्र (राजनीति) में आत्मसंस्कार न पाकर (शिक्षा न पाने के कारण) न तपाये हुए स्वर्ण के समान, अधिक शोभा नहीं देती। बुद्धिरहित राजा अत्युन्नत होने पर भी शत्रु द्वारा आक्रमण किये जाते हुए भी अपने को समझने में समर्थ नहीं होता है। वह साध्य तथा साधन का (समुचित) विभाग कर व्यवहार करने में भी समर्थ नहीं होता। अनुचित रीति से व्यवहार करने वाला राजा (अपने) कार्यों में

असफल होता हुआ, अपने तथा अन्य लोगों के द्वारा तिरस्कृत हुआ करता है। उस अवज्ञात (तिरस्कृत) राजा की आज्ञा, प्रजा के योग (अप्राप्त का प्राप्त करना) तथा क्षेम (प्राप्त की सुरक्षा) साधने में समर्थ नहीं होती। (फिर तो) शासन का उल्लंघन (अतिक्रमण) करने वाली प्रजाएँ अपनी इच्छानुसार जो चाहती है वही कहने लगा करती हैं, अपनी इच्छानुसार व्यवहार करने लगा करती हैं तथा अन्त में सम्पूर्ण स्थिति (मर्यादा) को छिन्न–भिन्न (तितर–बितर) कर देती हैं। (पुनः) ऐसी मर्यादाहीन प्रजाएँ इस लोक तथा परलोक दोनों से अपने को तथा (अपने) स्वामी को भ्रष्ट कर देती है। लोकयात्रा (जीवन यात्रा) (तो) शास्त्र रूपी दीपक से देखे हुए मार्ग (पर चलने) से (ही) सुखपूर्वक चलती है। वह रहने वाले एवं दूरस्थ विषयों में भी अप्रतिहत गति से पहुँच जाया करती है, कहीं भी रुकती नहीं है। उस (शास्त्र ज्ञान) से रहित प्राणी लम्बे–चौड़े तथा विशाल नेत्रों के रखते होने पर भी अर्थदर्शन (राजनीति) में सामर्थ्य (ज्ञान अथवा योग्यता) न होने के कारण अंधा ही हुआ करता है। अतः आप बाह्य विद्याओं की आसक्ति (रुचि) का त्याग कर अपनी वंश परम्परा की विद्या (दण्डनीति) की ओर ध्यान लगायें तथा सीखें। उसके अर्थों (नियमों) के अनुसार व्यवहार करने से (व्यवहार करके) शक्तिसिद्धि प्राप्त कर बाधाओं से रहित शासन वाला बनकर, चिरकाल तक, समुद्ररूपी करधनी वाली (अर्थात् समुद्र से घिरी हुई) पृथ्वी पर शासन करो।

दण्डी ने इसके बाद एक वेश्या लम्पट विहारभद्र नामक सेवक के द्वारा राजकुमार को बड़े तार्किक ढंग से बहकाने का वर्णन किया हैं। वह राजा को विषयभोग आदि का महत्त्व बताकर पथभ्रष्ट करता है। यह वर्णन भी कवि की उर्वर कल्पना शक्ति का द्योतक है।

देव, दैवानुग्रहेण यदि कश्चिद्भाजनं भवति विभूतेः, तमकस्मादुच्चावचैरुपप्रलोभनैः कदर्थयन्तः स्वार्थं साधयन्ति धूर्ताः तथाहि केचित्प्रेत्य किल लभ्यैरभ्युदयातिशयैराशामुत्पाद्य, मुण्डयित्वा शिरः, बद्ध्वा दर्भररज्जुभिः, अजिनेनाच्छाद्य, नवनीतेनोपलिप्य, अनशनं च शाययित्वा, सर्वस्वं स्वीकरिष्यन्ति। तेभ्योऽपि घोरतराः पाषण्डिनः पुत्रदारशरीरजीवितान्यपि मोचयन्ति। यदि कश्चिद्त्पटुजातीयो नास्यै मृगतृष्णिकायै हस्तगतं त्युक्तमिच्छेत्, तमन्ये परिवार्याहुः–एकामपि काकिणीं कार्षापणलक्षमापादयेम, शस्त्रादृते सर्वशत्रून् घातयेम, एकशरीरणमाजमपि मर्त्यं चक्रवर्तिनं विदधीमहि, यद्यस्मदुद्दिष्टेन मार्गेणाचर्यते, इति।

इस प्रकार दण्डी का चरित्र–चित्रण अत्यन्त सजीव तथा विशद् है। उनके सभी पात्र वास्तविक से प्रतीत होते है। समाज के उच्च तथा निम्न वर्गों का वे जीता–जागता चित्र उपस्थित कर देते है। उनके 'दशकुमारचरितम्' से तत्कालीन रीति–रिवाजों का भी परिचय प्राप्त होता है। उनका रचना–कौशल भी देखने योग्य ही है। कथानक की रोचकता में वृद्धि करने के लिए दण्डी यत्र–तत्र शिष्ट हास्य, मधुर व्यंग्य तथा गम्भीर वर्णन का आश्रय ले लेते हैं। यदि कहीं पर वर्णनों का विस्तार मिलता है तो कहीं–कहीं लघु कथाएँ भी उपलब्ध होती हैं। कथाओं का क्रम प्रशंसा के योग्य है। मुख्य कथा के प्रवाह में अवान्तर कथाओं के आ जाने से किसी प्रकार गति–अवरोध उत्पन्न नहीं होता है। व्याकरण की दृष्टि से भी 'दशकुमारचरितम्' पूर्णतया निर्दोष है। इस भाँति सजीव चरित्र–चित्रण, स्वाभाविक शैली, शिष्ट हास, रसानुकूल शब्द विन्यास, बुद्धिचातुर्य, यथार्थ एवं आदर्श का सुमधुर सामंजस्य इत्यादि अनेक विशेषताओं से सुसज्जित 'दशकुमारचरितम्' संस्कृत गद्य साहित्य में अपना एक अनूठा तथा विशिष्ट स्थान रखता है।

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें

   I. दण्डी का जन्म कहाँ हुआ? (विदर्भ/कश्मीर)

   II. दण्डी के पिता का क्या नाम है? (वीरदत्त/भारवि)

   III. दण्डी का समय क्या है? (प्रथम शताब्दी/सप्तम् शताब्दी)

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   I. दण्डी के माता का नाम ..... हैं। (गौरी देवी/सीता देवी)

   II. दण्डी की रचना ..... हैं। (कादम्बरी कथामुखम्/ दशकुमारचरितम्)

   III. दशकुमारचरितम्..... विभक्त हैं। (सर्गों में/उच्छावासों में)

बोध प्रश्न–2

1. दण्डी का जीवनवृत्त एवं कर्तृत्त्व स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. मंत्री वसुरक्षित का चरित्र–चित्रण बताइये।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3. दण्डी की कथावस्तु स्पष्ट कीजिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

अभ्यास प्रश्न 1

1. दण्डी के कथावस्तु का वैशिष्ट्य स्पष्ट कीजिए।

15.6 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपने जाना की–

आचार्य दण्डी के जीवनवृत्त एवं कर्तृत्त्व के अर्न्तगत दण्डी को दाक्षिणात्य और सम्भवतः

विदर्भदेशीय (बरार निवासी) थे। इनका समय छठी शताब्दी के आरम्भ से लेकर सातवीं शती के उत्तरार्द्ध तक माना जाता है। ये आचार्य भारवि के प्रपौत्र थे। इनके पितामह का नाम मनोरथ तथा पिता का नाम वीरदत्त था। इनकी माता का नाम गौरी था। इनके द्वारा प्रणीत तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते है–काव्यादर्श, दशकुमारचरितम् एवं अवन्तिसुन्दरी कथा का ज्ञान प्राप्त किया।

- विश्रुतचरितम् की कथावस्तु के अर्न्तगत यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि यह एक घटना प्रधान काव्य है। दण्डी ने अपनी कल्पनाशीलता से इन घटनाओं को रोमांचक एवं रमणीय बना दिया है। उसमें स्वाभाविकता की उपस्थिति के कारण पाठक जैसे अभिभूत हो जाता है। यह दण्डी के काव्य कौशल का ही परिणाम है कि विषयान्तरों वर्णन से कथा प्रवाह अवरुद्ध नहीं होता। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि किसी भी घटना का वर्णन करते हुए दण्डी मानों उसका चित्र खींच देते हैं।
- विश्रुतचरितम् में वर्णित पात्र चित्रण के अर्न्तगत दण्डी के पात्रों का चित्रण में उनके पात्र सजीव एवं वास्तविक प्रतीत होते है। इसमें समाज के सभी वर्गों का चित्रण किया गया है। उनके पात्र मानव–स्वभाव के विविध रूपों का प्रतिनिधित्व करते है। इसमें मंत्री वसुरक्षित की विवशता, सेवक विहारभद्र की कुटिलता, नालीजंघ की कर्तव्य परायणता, राजा अनन्तवर्मा के कर्तव्यहीनता का परिचय ज्ञान प्राप्त हुआ।
- विश्रुतचरितम् के वैशिष्ट्य के अर्न्तगत दण्डी ने अपने प्रखर तथा व्यावहारिक दृष्टिकोण से अपने आस–पास घट रहे विषय को वास्तविक रूप से ग्रहण कर काव्यात्मक परिवेश में प्रस्तुत किया। इसके छोटे–छोटे वाक्यों का प्रयोग किया है जो ओजगु ण प्रधान, मनोहर एवं सुस्पष्ट है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सशक्त अभिव्यक्ति, चित्ताकर्षक, शब्दविन्यास एवं कल्पना की मौलिकता ने इसको समृद्ध बना दिया है।

15.7 शब्दावली

- अभिव्यक्ति – प्रकटीकरण
- चित्ताकर्षक – चित्त को सुन्दर लगने वाला
- शब्दविन्यास – शब्द की संरचना
- काव्यात्मक – रस एवं अलंकार से युक्त
- कुटिलता – दुष्टता
- कर्तव्यपरायणता – कार्य करने में प्रवीण
- कर्तव्यहीनता – कार्य करने में असमर्थ
- रोमांचक – हर्ष से युक्त

15.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- विश्रुतचरितम् (संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित) सम्पादक एवं व्याख्याकार, डॉ॰ विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन जयपुर
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार डॉ॰ शशिशेखर चतुर्वेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी

- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार मीनाकुमारी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस, शक्तिनगर दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी
- संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद

15.9 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. **(i) विदर्भ (ii) वीरदत्त (iii) सप्तम् शताब्दी**
2. **(i) गौरी देवी (ii) दशकुमारचरितम् (iii) उच्छवासो में**

बोध प्रश्न 2

1 आचार्य दण्डी के जीवनवृत्त एवं कर्तृत्त्व के अर्न्तगत दण्डी को दाक्षिणात्य और सम्भवतः विदर्भदेशीय (बरार निवासी) थे। इनका समय छठी शताब्दी के आरम्भ से लेकर सातवीं शती के उत्तरार्द्ध तक माना जाता है। ये आचार्य भारवि के प्रपौत्र थे। इनके पितामह का नाम मनोरथ तथा पिता का नाम वीरदत्त था। इनकी माता का नाम गौरी था। इनके द्वारा प्रणीत तीन ग्रन्थ उपलब्ध होते है–काव्यादर्श, दशकुमारचरितम् एवं अवन्तिसुन्दरी कथा

2 वसुरक्षित अनन्तवर्मा का आमात्य था। वह उसके पिता के समय से मन्त्री के रूप में कार्य कर रहा था। अतः उसके मन में राजा तथा राज्य के प्रति स्वाभाविक निष्ठा थी। अनन्तवर्मा की लेशमात्र भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वह सदा नृत्य, गीत, चित्रकर्म मद्यपान आदि में रहता था। वसुरक्षित एक प्रभावशाली वक्ता (प्रगल्लभ वाक्) था। मर्यादा का पालन करने वाला था। यद्यपि आयु में वह ज्येष्ठ था, परन्तु पद की दृष्टि से अनन्तवर्मा का स्थान ऊँचा था। अतः राज्य के हित की कामना से जब वह अनन्तवर्मा को उपदेश देने का निश्चय करता है, तो वह अपेक्षित मर्यादा का पालन करता है। उदाहरणस्वरूप वह उसे सबके सामने कुछ न कहकर एकान्त में उपदेश देता है। अनन्तवर्मा आयु में मंत्री वसुरक्षित से छोटा है तथा उसके स्वामी पुण्यवर्मा का पुत्र है, अततः उसे स्नेहवश 'तात' कहकर सम्बोधित करता है।

3 विश्रुतचरितम् की कथावस्तु के अर्न्तगत यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि यह एक घटना प्रधान काव्य है। दण्डी ने अपनी कल्पनाशील से इन घटनाओं को रोमांचक एवं रमणीय बना दिया है। उसमें स्वाभाविकता की उपस्थिति के कारण पाठक जैसे अभिभूत हो जाता है। यह दण्डी के काव्य कौशल का ही परिणाम है कि विषयान्तरों वर्णन से कथा प्रवाह अवरुद्ध नहीं होता। इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि किसी भी घटना का वर्णन करते हुए दण्डी मानों उसका चित्र खींच देते हैं।

अभ्यास प्रश्न

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

इकाई 16 महाकवि दण्डी की भाषा–शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्, कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः)

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 महाकवि दण्डी की भाषा–शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्)

16.3 महाकवि दण्डी की भाषा–शैली(कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशय)

16.4 सारांश

16.5 शब्दावली

16.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

16.7 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

16.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- महाकवि दण्डी की भाषा शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्) से परिचित हो जायेंगे।
- महाकवि दण्डी की भाषा शैली (कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः) से परिचित हो जायेंगे।
- महाकवि दण्डी की भाषा शैली में प्रयुक्त साहित्यिक शब्दावली से परिचित हो जायेंगे।

16.1 प्रस्तावना

इकाई संख्या 16 महाकवि दण्डी की भाषा शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्, कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः) खण्ड के अर्न्तगत आता है। इसके अर्न्तगत महाकवि दण्डी के भाषाशैली का परिचय दिया गया। जिसके अर्न्तगत दण्डिनः पदलालित्यम् एवं कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः को स्पष्ट किया गया है। इस प्रकार दण्डी ने संस्कृत गद्य में एक नवीन शैली का सूत्रपात किया है। जिनका गद्य सुबन्धु की भाँति न तो श्लेष के भार से आकान्त है और न ही बाण के समान समासों के प्रहार से प्रताड़ित है। इनकी शैली में भावों की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति तथा पदलालित्यम् है। इन्हीं गुणों के कारण प्राचीन आलोचकों ने दण्डी को वाल्मीकि और व्यास के समकक्ष तीसरा कवि माना है–

जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।
कवि इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि।।

अतः इस इकाई में दण्डी के गद्य शैली, वाक्यविधान, अर्थ की स्पष्टता, रस की सरस अभिव्यक्ति, शब्दविन्यास की सुन्दरता तथा कल्पना की उर्वरकता को स्पष्ट किया गया। जिसके माध्यम से महाकवि दण्डी की शैली को समझने में सरलता होगी।

16.2 महाकवि दण्डी की भाषा–शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्)

आचार्य दण्डी संस्कृत के प्रथम गद्यकार हैं, क्योंकि सबसे प्राचीन कृतियाँ इनकी ही उपलब्ध होती हैं। इनके व्यक्तित्व के विषय में प्रामाणिक सामग्री का अभाव है। दण्डी इनका उपाधि का नाम प्रतीत होता है। 'अवन्तिसुन्दरी कथा' से दण्डी के जीवन के विषय में कुछ ज्ञात होता है, तदनुसार ये किरातार्जुनीय महाकाव्य के रचयिता भारवि के प्रपौत्र थे। बचपन में ही इनके माता–पिता का देहान्त हो गया था। ये कांची में निराश्रय ही रहते थे। इनके ग्रन्थों में प्राप्त विवरणों के आधार पर माना जा सकता है कि ये दाक्षिणात्य और सम्भवतः विदर्भदेशीय थे। नवम शताब्दी ई. के कुछ ग्रन्थों में दण्डी का नामोल्लेख मिलता है, अतः इनका समय इससे पूर्व ही है। दण्डी की भाषा के आधार पर इनको बाण से पहले का मानना उपयुक्त है और फिर दशकुमारचरित में वर्णित सामाजिक अवस्था हर्षवर्धन के राज्यकाल से पहले की अवस्था सिद्ध होती है, इसलिए दण्डी का स्थितिकाल 700 ई. के लगभग मानना उचित प्रतीत होता है।

शार्ङ्गधरपद्धति में राजशेखर ने महाकवि दण्डी की तीन कृतियों की बात की है–**त्रयो दण्डिप्रबन्धाश्च।** किन्तु दण्डी के नाम से प्रचलित ग्रन्थों की संख्या सात है–**दशकुमारचरित, काव्यादर्श, अवन्तिसुन्दरीकथा, छन्दोविचिति, कलापरिच्छेद, द्विसन्धानकाव्य, मृच्छकटिक।** इनमें से दशकुमारचरित और काव्यादर्श निश्चित रूप से दण्डी की कृतियाँ हैं, तो शेष का कृतित्व विवादास्पद है। कुछ विद्वान् छन्दोविचित या कलापरिच्छेद को दण्डी की तीसरी रचना बताते हैं, तो कुछ मृच्छकटिक को दण्डी की तीसरी रचना सिद्ध करते हैं। काव्यादर्श एक प्रौढ़ अलंकार–शास्त्र है और दशकुमारचरित एक सरस गद्यकाव्य है।

दण्डी का पदलालित्य गौरव का विषय है। उनकी भाषा में सुकुमारता, कोमलता, परिष्कार, प्राजंलता, प्रसाद और माधुर्य गुण हैं। दशकुमारचरित पढ़ने पर पाठक को यह अनुभूति होती है कि वह कुछ सरस रचना का रसास्वाद कर रहा है। जीवन को अनुभूतियाँ आँखों के सामने उतर आती है और वह कवि को अपना एक अन्तरंग मित्र सा अनुभव करता है। दण्डी के गद्य में न तो सुबन्धु के तुल्य 'प्रत्यक्षश्लेष' की योजना है और न बाण के तुल्य 'सरसस्वरवर्णपद' की कृत्रिमता है। उसमें दैनिक व्यवहार की प्रवाहशील भाषा है। छोटे–छोटे पद और वाक्य नवशिशुओं के तुल्य क्रीड़ा करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं और वे सहसा हृदय को आकृष्ट कर लेते है। कथाओं और उपन्यासों में प्रयुक्त मनोज्ञ शैली का इसमें अन्तर्भाव दिखता है। भाषा की सरसता, मधुरता और सहज–सुन्दरता नीरसता में भी सरसता का आधान कर देती है।

राजा राजहंस और उसकी पत्नी वसुमती के वर्णन में पदलालित्य और माधुर्य दर्शनीय है– **अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्टविद्यासंभारभासुरभूसुरनिकरः.....राजहंसो नाम घनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव। तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव।**

दिग्विजय के लिए प्रस्थान करने के इच्छुक राजकुमारों के वर्णन में यमक की निराली छटा कम मनोहर नहीं है।

कुमारामाराभिरामा रामाद्यपौरुषारुषा भस्मीकृतारयोरयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन यानेनाभ्युदयाशंसं राजानमकार्षुः।

कामदेव के तुल्य सुन्दर, रामादिवत् बली, क्रोध से शत्रुओं को भस्म करने वाले, वेग में वायु का उपहास करने वाले राजकुमारों ने दिग्विजयार्थ प्रस्थान के द्वारा राजा के अभ्युदय की सूचना दी।

कतिपय विद्वानों को भ्रम है कि मूल दशकुमारचरित में ऐसे यमकादि के प्रयोग नहीं है तथा देवादि–प्रशंसा भी नहीं है। उदाहरणार्थ सप्तम् उच्छवास से आर्ष शक्ति का वर्णन, नास्तिकों का निराकरण, महादेव विष्णु ब्रह्मा आदि देवों की स्तुति का प्रसंग दर्शनीय है।

दृश्यतां शक्तिरार्षी, यत् तस्य यतेरजेयस्येन्द्रियाणां संस्कारेण नीरजसा नीरजसांनिध्यशालिनि सहर्षालिनि सरसि सरसिजदलसंनिकाशच्छायस्याधिकतर दर्शनीयस्याकारान्तरस्य सिद्धिरासीत्। अद्य सकलनास्तिकानां जायेत लज्जावनतं शिरः। तदिदानीं चन्द्रशेखर–नरकशासन–सरसिजासनादीनां त्रिदशेशानां स्थानान्यत्यादररचितनृत्यगीताराधनानि क्रियन्ताम्।

दशकुमारचरित के सप्तम उच्छवास में दण्डी ने अपना एक नवीन चमत्कार दिखाया है। पूरे उच्छवास में एक भी ओष्ठय वर्ण का प्रयोग नहीं है। भाषा में वही स्वाभाविकता और प्रवाह। जैसे– **आर्य, कदर्यस्यास्य कदर्थनान्न कदाचिन्निद्रायाति नेत्रे'। 'सखे, सैशा सज्जनाचरिता सरणिः, यदणीयसि कारणेऽनणीयानादरः संदृष्यते।' 'असत्येन नास्यास्यं संसृज्यते। दिष्टया दृष्टेष्टसिद्धिः। इह जगति हि न निरीहदेहिनं श्रियः संश्रयन्ते। श्रेयांसि च सकलान्यनलसानां हस्ते संनिहितानि। तच्छरीरं छिद्रे निधाय नीरान्निरयासिशम्। बहुश्रुते विश्रुते विकचराजीवसदृशं दृशं चिक्षेप देवो राजवाहनः।**

अष्टम उच्छवास में पुण्यवर्मा के वर्णन में भाषा–लालित्य और प्रसाद गुणों का समन्वय देखिए–**तस्मिन्भोजवंशभूषणम्, अंशावतार इव धर्मस्य, अतिसत्त्वः, सत्यवादी, वदान्यः, विनीतः, विनेता प्रजानाम्, रंजितभृत्यः कीर्तिमान्, उदग्रः, बुद्धिमूर्तिभ्यामुत्थानशीलः, शास्त्रप्रमाणकः, शक्यभव्यकल्पारम्भी, संभावयिता बुधान्, प्रभावयिता सेवकान्, उद्भावयिता बन्धून्, न्यग्भावयिता शत्रून्, असंबद्धप्रलापेश्वदत्तकर्णः कदाचिदप्यवितृष्णो गणेषु, अतिनदीष्णः कलासु, नेदिष्ठो धर्मार्थसंहितासु, स्वल्पेऽपि सुकृते सुतरां प्रत्युपकर्त्ता, प्रत्यवेक्षिता कोशवाहनयोः, यत्नेन परीक्षिता सर्वाध्यक्षाणाम्, उत्साहयिता कृतकर्मणामनुरूपैर्दानमानैः, सद्यः प्रतिकर्त्ता दैवमानुषीणामापदाम्, षाड्गुण्योपयोगनिपुणः, मनुमार्गेण प्रणेता चातुर्वर्ण्यस्य, पुण्यश्लोकः पुण्यवर्मा नामाऽऽसीत्।**

दण्डी की लेखनी में ओज और आकर्षण है। उपन्यास के तुल्य उसकी रचना पाठक को बलात् हर लेती है। पद–लालित्य, प्रांजलता, प्रवाह के साथ ही साथ भाषा सुरुचिपूर्ण और मुहावरेदार है। छोटे–छोटे वाक्यों में कथा की अक्षुण्णता व्याप्त है। नीति–वाक्य भी बीच–बीच में प्रकाश स्तम्भ का कार्य करते हैं।

16.3 महाकवि दण्डी की भाषा–शैली (कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशय)

आचार्य दण्डी परिष्कृत गद्य–शैली के जन्मदाता हैं। गद्य का क्या स्वरूप होना चाहिए और उसमें भाव–भाषा–रस–अलंकारों का किस प्रकार समन्वय प्रस्तुत करना चाहिए, इसका आदर्श उन्होंने दशकुमारचरित में प्रस्तुत किया है। वे वैदर्भी शैली के कवि है। उनकी भाषा में प्रसाद और माधुर्य गुणों का चरमसीमा है। उनमें भावों की अभिव्यंजना की शक्ति इतनी प्रबल है कि कठिन से कठिन राजनीति आदि के तत्त्वों को सरलतम भाषा में प्रस्तुत कर सकते है। भावानुकूल पदावली का संचयन उनकी प्रमुख विशेषता

है। श्रृंगार, करुण आदि के वर्णन में उनकी भाषा में प्रसाद और माधुर्य की मंजुल छटा दर्शनीय है तो नखशिख वर्णन, प्रकृति वर्णन आदि में समासयुक्त और सालंकार पदावली भी उतनी ही प्रौढ़ तथा परिष्कृत है। उन्हें सदा ध्यान रहता है कि वे कथा लिख रहे हैं, न कि काव्य। अतएव उनकी सबसे प्रमुख विशेषता है कि वे कथा के प्रवाह में कभी भी अवरोध उपस्थित नहीं होने देते। प्रकृति आदि के वर्णन का मोह एवं मायाजाल निर्लिप्त दण्डी स्वामी के तुल्य उन्हें अपने वशीभूत नहीं कर पाता। उनकी शैली सरल होने पर भी प्रांजल है, कोमल होने पर भी प्रौढ़ हैं, अकृत्रिम होने पर भी सालंकार है, वाच्यार्थप्रधान होने पर भी व्यंग्यार्थक है। दण्डी श्रृंगार का वर्णन करते हुए भी निर्लिप्त है, अर्थ और काम की प्रमुखता बताते हुए भी धर्म–प्रधान हैं, कामशास्त्र की शिक्षा देते हुए भी नीतिशास्त्र के उपदेशक है। दण्डी की शैली में एक ओर श्रृंगार है तो दूसरी ओर हास्य, एक ओर करुण है तो दूसरी ओर भयानक, एक ओर ज्ञान है तो दूसरी ओर नीति, एक ओर आदर्श है तो दूसरी ओर व्यवहार, एक ओर जीवन की वास्तविकता है तो दूसरी ओर व्यवहार। इस प्रकार दण्डी में विरोधी गुणों का अपूर्व समन्वय मिलता है। उनकी भाषा में परिष्कार, प्राजंलता और लोच गुण है। उनका पदलालित्य परकालीन लेखकों के लिए आदर्श रहा है, अतएव **'दण्डिनः पद–लालित्यम्'** सुभाषित अत्यन्त प्रचलित है। 'मधुराविजय'–महाकाव्यकार गंगादेवी ने दण्डी की कृति को सरस्वती का मणिदर्पण बताया है।

आचार्यदण्डिनो वाचामाचान्तामृतसम्पदाम्।
विकासो वेधसः पत्न्या विलासमणिदर्पणम्।।

कुछ समालोचकों ने कवि के रूप में दण्डी से पूर्व केवल वाल्मीकि और व्यास को ही स्थान दिया है। वाल्मीकि के होने पर 'कविः' प्रयोग हुआ, व्यास के होन पर 'कवी' (द्विवचन) और दण्डी के होने पर 'कवयः' (बहुवचन) प्रयोग आरम्भ हुआ।

जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।
कवी इति ततो व्यासे, कवयस्त्वयि दण्डिनि।।

कुछ आलोचकों का मत है कि कवित्व का परिपाक केवल दण्डी में ही दृश्य है, अन्यत्र नहीं। अतः कहा है–**'कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः।'**

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें–

I. दण्डी का वाक्य विधान कैसा है? (वाक्य प्रायः छोटे–छोटे/वाक्य प्रायः दीर्घ)

II. दण्डी किस रीति के कवि है? (वैदर्भी/गौणी)

III. दण्डी की गद्यशैली कैसी है? (सुबोध, सरस, प्रवाहमयी/दुर्बोध, निरस, अप्रावहमयी)

बोध प्रश्न–2

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

I. दण्डी का पदलालित्य..... हैं। (अनुप्रास युक्त एवं मनोरम पदविन्यास/श्लेषमय व रुचिरस्वर वर्णपद)

II. दण्डी की गद्यशैली में.....तत्वों को सरलता से समझा गया हैं।

(राजनीति / सरलनीति)

III. दण्डी के पात्र ..... हैं। (सजीव और यथार्थ / निर्जीव और अयथार्थ)

बोध प्रश्न–3

1. दण्डी की रचना का मुख्य उद्देश्य क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

2. दण्डी का सारा वर्णन यथार्थवादी है इसको स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

1. दण्डी की भाषा शैली (दण्डिनः पदलालित्यम्) को स्पष्ट कीजिए।

16.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप–

- दण्डी वैदर्भी रीति के कवि हैं। इनकी गद्य शैली सुबोध, सरस एवं प्रवाहमयी है। कठोर ध्वनियों, अतिशयोक्तियों और शब्दाडम्बरों के बोझ से वे अपनी भाषा को बोझिल नहीं बनाते। वाक्य प्रायः छोटे–छोटे है परन्तु ओजस्वी, ललित और सुव्यक्त है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सरस अभिव्यक्ति, शब्द विन्यास की सुन्दरता तथा कल्पना की उर्वरकता दण्डी के विशेष गुण है। प्रस्तुत पंक्तियों में सूर्योदय का वर्णन अत्यन्त काव्यात्मक एवं सरस है–**चिन्तयत्येव मयि महार्णबोधमग्नमार्तण्डतुरंगमष्वासरयावभूतेव व्यवतर्तत त्रियामा समुद्रगर्भवासजडीकृतइवमन्दप्रतापो दिवसकरः प्रादुरासीत्।**
- दण्डी के पदलालित्य की अत्यधिक प्रशंसा की गई है–**'दण्डिनः पदलालित्यम्'।** अनुप्रासयुक्त व मनोरम पदविन्यासों की रचना करने में वे अद्वितीय है। राजहंस और उसकी पत्नी वसुमती के वर्णन में नाद सौन्दर्य, पदलालित्य और माधुर्य दर्शनीय है– **अनवरतयागदक्षिणारक्षितशिष्टविशिष्टविद्यासंभारभासुरभूसुर निकरः.....राजहंसो नाम धनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव। तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावती कुलषेखमणी रमणी बभूव।**
- भाषा भावों के अनुरूप ही है। युद्ध के लिए प्रस्थान करते हुए राजकुमारों का सुन्दर तथा अलंकृत वर्णन कवि द्वारा यमकालंकार की सहायता से किया गया

है–'**कुमारामाराभिरामा रामाद्यपौरुशा रुशा भस्मीकृतारयो रयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन यानेनाभ्युदयाषंसं राजानमकार्शुः।** दण्डी की भाषा शैली को ही ध्यान में रखते हुए कुछ आलोचकों ने कहा है कि केवल दण्डी ही वास्तव में कवि है–**कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः।**

16.5 शब्दावली

अतिशयोक्ति	–	बड़ा चढ़ाकर प्रस्तुत करना
अभिव्यक्ति	–	प्रस्तुतीकरण
शब्दविन्यास	–	शब्द की रचना

16.6 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- विश्रुतचरितम् (संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित) सम्पादक एवं व्याख्याकार, डॉ॰ विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन जयपुर
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार डॉ॰ शशिशेखर चतुर्वेदी , चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार मीनाकुमारी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस, शक्तिनगर दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी
- संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद

16.7 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. **(i) वाक्य प्रायः छोटे–छोटे (ii) वैदर्भी (iii) सुबोध, सरस, एवं प्रवाहमयी**
2. **(i) अनुप्रास व मनोरम पदविन्यास(ii) राजनीति (iii) सजीव और यथार्थ**

बोध प्रश्न–3

1 दण्डी की रचना का मुख्य उद्देश्य समाज की रहस्यमयी एवं धूर्ततापूर्ण प्रवृत्ति के जाल की पहचान करवाने के साथ–साथ पाठकों का मनोरंजन करना भी था। उन्होंने केवल उच्च वर्ग के ही चरित्रों का वर्णन नहीं किया अपितु निम्नवर्ग का भी जीता जागता चित्र हमारे समक्ष प्रस्तु किया है। दम्भी तपस्वी, कपटी ब्राह्मण, कामान्ध युवक – युवती तथा छली वेश्याओं का बहुत ही रुचिर एवं स्वाभाविक चित्रण है। गौण पात्रों को भी कवि ने अपने वर्णन में जीवन्त कर दिया है। छल–कपट, मार–काट, चौरी–डकैती आदि से भरपूर दशकुमारचरित एक लोमहर्षक कृति है।

2 कवि का सारा वर्णन यथार्थवादी है। वह दैनिक जीवन की घटनाओं से सम्बधित है। यह ग्रन्थ न तो शिक्षापूर्ण है और न ही इसमें नीतिशास्त्र के सिद्धान्तों को सिखलाने का प्रयास किया गया है। इसमें चौरशास्त्र, राजनीतिशास्त्र तथा कहीं–कहीं कामशास्त्र का भी विद्धत्तापूर्ण वर्णन किया गया है। ग्रन्थ के मुख्य पात्र भी उचित अनुचित का विचार त्याग कर अपनी कार्यसिद्धि ही करना चाहते है। दण्डी ने ढूँढ–ढूँढ कर सामाजिक बुराइयों का उद्‌घाटन किया है।

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 17 विश्रुतचरितम् (1–10 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 गद्यांश की अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

- 17.2.1 बालक द्वारा विश्रुत से वृद्ध को कुएँ से बाहर निकालने का निवेदन
- 17.2.2 विश्रुत द्वारा वृद्ध को कुएँ से बाहर निकालना और उन दोनों का परिचय पूछना
- 17.2.3 उस बालक एवं अपना परिचय देने के क्रम में राजा पुण्यवर्मा का चरित्र चित्रण
- 17.2.4 राजा पुण्यवर्मा के पश्चात् अनन्तवर्मा का राजसिंहासनारुढ़ होना
- 17.2.5 राजा अनन्तवर्मा के शासन नीति से असंतुष्ट प्रजा को देखकर मंत्री वसुरक्षित द्वारा उसको अनुभव पूर्ण बातें कहना
- 17.2.6 विहारभद्र ने अनन्तवर्मा को, राज्योचित व्यवहारोपदेश का पालन न करने से मना करना एवं कवि के द्वारा विहारभद्र के चरित्र को स्पष्ट करना
- 17.2.7 अनन्तवर्मा को विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के परिप्रेक्ष्य को ईशद्हास्य वाक्य कहना
- 17.2.8 सेवक विहारभद्र द्वारा दण्डनीति को बुरा बतलाते हुए उसे पालन न करने का सुझाव देना
- 17.2.9 कवि दण्डी ने दण्डनीति के अर्न्तगत सेवक विहारभद्र के द्वारा राजा की दिनचर्या का वर्णन
- 17.2.10 विहारभद्र के द्वारा राजा की रात्रिचर्या का वर्णन

17.3 सारांश

17.4 शब्दावली

17.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

17.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

17.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- विश्रुतचरितम् के 1–10 परिच्छेद तक अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण को जानेंगे।
- प्रथम परिच्छेद में राजकुमार विश्रुत ने अपने विन्ध्याटवी पर्यटन के दौरान बालक को देखा और उसके रक्षक एक वृद्ध पुरुष को कुएँ से बाहर निकाला, से परिचित होंगे।
- द्वितीय परिच्छेद में राजकुमार विश्रुत के द्वारा वृद्ध से उसका तथा उस बालक का परिचय पूछा है, से परिचित होंगे।
- तृतीय परिच्छेद में उस वृद्ध ने उस बालक का परिचय देते हुए उसके पितामह राजा पुण्यवर्मा के परिचय को जान सकेंगे।
- चतुर्थ परिच्छेद में पुण्यवर्मा की मृत्यु के बाद उस बालक के पिता अनन्तवर्मा सिंहासनारुढ़ के वर्णन को जान सकेंगे।

- पंचम परिच्छेद में अनन्तवर्मा की राजनीति से असंतुष्ट लोगों को देखकर उसके वृद्ध मंत्री वसुरक्षित ने उससे एकांत में राज्य संचालन हेतु अनुभव पूर्ण बात कही है, को जानेंगे।
- षष्ठ परिच्छेद में विहारभद्र नामक सेवक उससे उस उपदेश का पालन न कर अपनी इच्छानुसार इन्द्रियजनित सुखों को भोगने के लिए कहता है तथा कवि ने कुटिल सेवक विहारभद्र के विशेषणों को प्रस्तुत किया है, उसकी जानकारी होगी।
- सप्तम परिच्छेद में कवि ने राजा अनन्तवर्मा का सेवक विहारभद्र ने कुटिलता पूर्वक राज्योनुचित उपदेश दिया है, उससे परिचित होंगे।
- अष्टम परिच्छेद में दण्डी ने दण्डनीति के उपदेश को सेवक विहारभद्र के द्वारा राजा को दिलवाया उससे परिचित होंगे।
- नवम परिच्छेद में कवि दण्डी ने विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के अर्न्तगत राज्योचित राजा के दिनचर्या के वर्णन से परिचित होंगे।
- दशम परिच्छेद में कवि दण्डी ने विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के अर्न्तगत राज्योचित राजा के रात्रिचर्या के वर्णन से परिचित होंगे।

17.2 प्रस्तावना

इकाई संख्या 17 के अन्तर्गत (विश्रुतचरितम् 01–10 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण से परिचित हो पायेगे। इसमें विश्रुतचरितम् 1–10 परिच्छेद तक अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण के अन्तर्गत प्रथम परिच्छेद से दश परिच्छेद तक में क्रमशः राजकुमार विश्रुत अपने पर्यटन का अनुभव प्रस्तुत करता है। इसके पश्चात् वृद्ध मंत्री वसुरक्षित अनन्तवर्मा को उचित प्रकार से राजकाज करने के लिये बाहरी विद्याओं की आसक्ति त्यागकर दण्डनीति आदि को सीखने का उपदेश देता है। किन्तु अनन्तवर्मा का विहारभद्र नामक सेवक उससे उस उपदेश का पालन न कर अपनी इन्द्रिय इच्छानुसार सुखों को भोगने के लिये कहता है। इसके प्रत्येक परिच्छेद का अनुवाद, शब्दार्थ, व्याख्या और साहित्यिक विशेषता एवं व्याकरण को स्पष्ट किया गया है तथा कवि ने कुटिल सेवक विहारभद्र के विशेषणों को प्रस्तुत किया है। सप्तम परिच्छेद में कवि ने राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहारभद्र ने कुटिलता पूर्वक राज्योनुचित उपदेश दिया है। अष्टम परिच्छेद में दण्डी ने दण्डनीति के उपदेश को सेवक विहारभद्र के द्वारा राजा को दिलवाया है। नवम परिच्छेद में कवि दण्डी ने विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के अर्न्तगत राज्योचित राजा की दिनचर्या का वर्णन किया गया है। दशम परिच्छेद में कवि दण्डी ने विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के अर्न्तगत राज्योचित राजा के रात्रिचर्या का वर्णन किया गया है।

17.2 गद्यांश की अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

17.2.1 बालक द्वारा विश्रुत से वृद्ध को कुएँ से बाहर निकालने का निवेदन

अथ सोऽप्याचचक्षे–देव!मयाऽपि परिभ्रमता विन्ध्याटव्यां कोऽपि कुमारः क्षुधा तृषा च क्लिश्यन्नक्लेशार्हः क्वचित्कूपाभ्याशेऽष्टवर्षदेशीयो दृष्टः। स च त्रासगद्गद्मगदत्–महाभाग, क्लिष्टस्य मे क्रियतामार्य, साहाय्यकम्। अस्य मे प्राणापहारिणीं पिपासां प्रतिकर्तुमुदकमुदञ्चन्निह कूपे कोऽपि निष्कलो ममैकशरणभूतः पतितः। तमलमस्मि नाहमुर्द्धतुम् इति।

शब्दार्थ–

अथ–इसके बाद अर्थात् सप्तम उच्छवास में मन्त्रगुप्त के द्वारा बताये गये वृतान्त के बाद। **सः**–वह, विश्रुत नामक राजकुमार। **आचचक्षे**–बोला। **परिभ्रमता**–चारों ओर भ्रमण करते हुए, घूमते हुए। **क्षुधा**–भूख से। **तृषा**–प्यास से। **क्लिष्यन्**–दुःखी होता हुआ, कष्ट का अनुभव करता हुआ। **कूपाभ्याशे**–कूँए के समीप। **अष्टवर्षदेशीयः**–आठ वर्ष की उम्र वाला। **त्रासगद्गदम्**–डर से रूँधे हुए कण्ठ के स्वर से। **अगदत्**–बोला, कहा। **क्लिष्टस्य**–कष्ट में पड़े हुए (मुझको)। **आर्य**–हे श्रेष्ठ, पूजनीय। **साहाय्यकम्**–सहायता। **प्राणापहारिणीम्**–प्राणों को हरने वाली। **पियासाम्**–प्यास को। **प्रतिकर्तुम्**–दूर करने के लिए। **उदंचन्**–निकालते हुए। **इह कूपे**–इस या यहाँ कुएँ में। **निष्कलः**–बूढ़ा। **ममैकशरणभूतः**–एकमात्र मेरे सहारे के रूप में स्थित। **पतितः**–गिर गया है। **अलम्**–समर्थ, सक्षम। **उद्धर्तुम्**–उद्धार करने के लिए, कुएँ से निकालने में।

अनुवाद–

इसके पश्चात् उसने (विश्रुत ने) भी कहा –'हे महाराज! मेरे द्वारा भी घूमते–घूमते विन्ध्यांचल के वन में भूख तथा प्यास से पीड़ित, कष्टों को सहन करने में असमर्थ, किसी कुएँ के समीप लगभग आठ वर्ष का एक बालक देखा गया।' (मुझे देखकर) भयभीत वह (बालक) गद्गद् (रूँधे हुए) स्वर में बोला–'हे महाभाग! आर्य (पूज्य), कष्ट में पड़े हुए मुझ (बालक) की (आपके द्वारा) सहायता की जाय। प्राणों का अपहरण करने वाली प्यास को दूर करने के निमित्त पानी को निकालने (खींचते हुए) एक वृद्ध (पुरुष), जो कि मेरा एक मात्र सहारा था, इसी कुएँ में गिर गया है। उसको (इस कुँए से बाहर) निकालने में मैं समर्थ नहीं हूँ।'

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

कुमार मन्त्रगुप्त के सम्पूर्ण वृतान्त को सुनकर राजवाहन ने अपने मित्रों के साथ मुस्कुराते हुए मन्त्रगुप्त को अभिवादन करते हुए कहा कि महामुनि का चरित्र अत्यंत विलक्षण है, जिसमें आनन्द को प्रदान करने वाले आपके बुद्धि कौशल का स्वरूप देखा गया है। इसके बाद अनेक शास्त्रों के मर्मज्ञ उस विश्रुत से अपना वृतान्त सुनाने को राजवाहन ने कहा। विश्रुत ने अपना वृतान्त राजवाहन को सुनाते हुए बोला कि वह घूमते हुए विन्ध्य के जंगलों में पहुँचकर देखा कि एक बालक भूख–प्यास से व्याकुल था और उसका एकमात्र सहारा एक बूढ़ा आदमी कुएँ से पानी खीचते समय उसी में गिर गया था। वह विश्रुत से कहता है कि उसका एकमात्र आश्रय रूप वृद्ध इस कुएँ में गिर गया है, जिससे वह स्वयं निकल नहीं सकता।

इस गद्यांश में प्रसाद गुण, करुण रस तथा अनुप्रास अलंकार है। इसकी भाषा सहज, सरल एवं सामासिक पदावली से रहित है।

व्याकरण

आचचक्षे–आ √चक्ष् आत्मनेपदी, लिट्लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन, (कहा)
परिभ्रमता–परि √भ्रम्+शतृ प्रत्यय, पुलिंग, तृतीया विभक्ति एकवचन 'मया' का

विशेषण। **तृशा**–√ तृष्+क्विप् प्रत्यय, स्त्रीलिंग, तृतीया विभक्ति, एकवचन। **क्षुधा**–√क्षुध्+क्विप् प्रत्यय, स्त्रीलिंग, तृतीया विभक्ति एकवचन। **विन्ध्याटव्याम्**–विन्ध्यस्य अटवी इति विन्ध्याटवी, षष्ठी तत्पुरुष, तस्याम्। **क्लिष्यन्**–√क्लिश्+शतृ प्रत्यय, पुलिंग, प्रथमा विभक्ति एकवचन। **अष्टवर्षदेशीयः**–अष्टवर्ष+देशीयर्, ईषदसमाप्तौ कल्पदेश्यदेशीयरः से देशीय प्रत्यय 'लगभग' के अर्थ का बोधक प्रत्यय। लगभग आठ वर्ष काअसमाप्ताष्टवर्षः। **दृश्टः**–दृश्+क्त् प्रत्यय, पुलिंग, प्रथमा विभक्ति एकवचन। **अक्लेशार्हः**–क्लेशस्य अर्हः इति क्लेशार्हः, षष्ठी तत्पुरुष, न क्लेशार्हः इति अक्लेशार्हः, नञ् तत्पुरुष समास। **त्रासगद्गद्**–त्रासेन गद्गदम् इति त्रासगद्गदम्, तृतीया तत्पुरुष। त्रासः–√त्रस्+घञ् प्रत्यय, भय। **गद्गदम्**–गद्गद् + अच् प्रत्यय। यह विशेषण पद है। **अगदत्**–√गद् लङ्, प्रथम पुरुष, एकवचन, बोला। **महाभाग**–महान् भागः यस्य सः महाभागः तत्सम्बुद्धौ हे महाभाग (बहुव्रीहि) **क्लिष्टस्य**–क्लिश्+क्त्। **साहाय्यकम्**–सहायस्य भावः साहाय्यम् सहाय+ष्यञ्, साहाय्यम् एव साहाय्यकम्, साहाय+कन् (स्वार्थे) **पिपासाम्**–पातुं इच्छा पिपासा, पा+सन्+टाप्। **प्राणापहारिणीम्**–प्राणान् अपहर्तुं शीलमस्याः इति प्राणापहारिणी ताम् प्राणापहारिणीम्, प्राण+अप+हृ+णिनि+ङीप् (ताच्छील्येणिनिः)। **प्रतिकर्तुम्**–प्रति+कृ+तुमुन्। **उदचंन**–उत्+अंच्+शतृ प्रथमा एकवचन पुल्लिंग। **निष्कलः**–निर्गताः कलाः यस्मात् स निष्कलः (बहुव्रीहि)। **ममैकशरणभूतः**–मम+एकशरणभूतः, एकम् (केवलम्) एव शरणम् इति एक शरणम् (कर्मधारय) एक शरणं भूतः इति एकशरणभूतः। **पतितः**–पत्+क्त्। **उर्द्धतुम्**–उत्+हृ+तुमुन्।

17.2.2 विश्रुत द्वारा वृद्ध को कुएँ से बाहर निकालना और उन दोनों का परिचय पूछना

अथाहमभ्येत्य व्रतत्या कयाऽपि वृद्धमुत्तार्य तं च बालं वंशनालीमुखोद्धृताभिरद्भिः फलैश्च पञ्चषैः शरक्षेपोच्छ्रितस्य लकुचवृक्षस्य शिखरात्यापाषाणपातितैः प्रत्यानीतप्राणवृत्तिमापाद्य तरुतलनिषण्णस्तं जरन्तमब्रवम्–तात, क एषः बालः को वा भवान् कथं, चेयमापदापन्ना इति।

शब्दार्थ–

अभ्येत्य–पास जाकर, समीप पहुँचकर। **व्रतत्या**–लता से। **कयाऽपि व्रतत्या**–किसी भी लता से। **उत्तार्य**–उतार कर, बाहर निकाल कर। **वंशनालीमुखोद्धृताभि**–बाँस की नली से निकाले गये। **अद्भिः**–पानी से, जल से। **शरक्षेपोच्छ्रितस्य**–(धनुष से) छोड़े गये बाण की ऊँचाई से अधिक ऊँचा। **लकुचवृक्षस्य**–बड़हल के पेड़ के। **पातितैः**–गिराये गये। **पञ्चषैः**–पाँच, छः। **प्रत्यानीतप्राणवृत्तिम्**–पुनः वापस लायी गई प्राण (चेतना) वाला, पुनः मूर्च्छा से होश में आया हुआ। **आपाद्य**–करके। **तरुतलनिषण्णः**–पेड़ के नीचे बैठा हुआ। **जरन्तम**–वृद्ध को, उस बूढ़े आदमी को। **कथम्**–किस प्रकार, कैसे। **इयमापदापन्ना**–यह विपत्ति आ गई, यह विपदा आ पड़ी।

अनुवाद–

इसके अनन्तर मैंने समीप जाकर कुछ लताओं को एकत्र करके उनकी (सहायता से) उस वृद्ध को (कुएँ से) बाहर निकाल कर, बाँस की नली से निकाले हुए जल (तथा) बाण फेकने से जितना ऊँचा जा सकता है, उतने ऊँचे बड़हर के वृक्ष की चोटी से,

पत्थर से (पत्थर मारकर) गिराए हुए पाँच छः फलों से, उस बालक की प्राण वृत्ति लौटाकर (उस बालक को होश में लाकर), वृक्ष के नीचे बैठकर उस वृद्ध से कहा –हे माननीय! यह लड़का कौन है? तथा यह विपत्ति कैसे आ पड़ी?

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

प्रस्तुत गद्यांश में विश्रुत ने किस प्रकार बूढ़े आदमी को कुएँ से बाहर निकाला और मूर्च्छित बालक को चेतना में लाते हुए वृद्ध से बालक एवं उसके परिचय के बारे में पूछा।

विश्रुत ने लताओं को जोड़कर रस्सी बनाकर उस बूढ़े आदमी को कुएँ से बाहर निकाला तथा मूर्च्छित बालक को पानी और फल खिलाकर चैतन्य किया और उस वृद्ध से विश्रुत ने पूछा कि आप तथा यह बालक कौन है?

इस गद्यांश में प्रसाद गुण, शान्तरस तथा अनुप्रास अलंकार है। गद्यांश की भाषा भावानुकूल तथा लालित्यपूर्ण है।

व्याकरण–

अभेत्य–अभि+आ+इ+ल्यप् प्रत्यय। **व्रतत्या**–वृतति शब्द की तृतीया विभक्ति का एकवचन। **उत्तार्य**–उत्+तृ+णिच्+ल्यप् प्रत्यय। **वंशनाली मुखोद्धताभि**–वंशस्य नाली इति वंशनाली (षष्ठी तत्पुरुष) तस्या मुखं इति वंशनालीमुखम् तेन उद्धृताः इति वंशनालीमुखोद्धृताः ताभिः वंशनालीमुखोद्धृताभिः (तृतीया तत्पुरुष) **शरक्षेपोच्छ्रितस्य**–शरस्य क्षेपः इति शरक्षेपः (षष्ठी तत्पुरुष) शरक्षेपात् अपि उच्छ्रितः इति शरक्षेपोच्छ्रितः (पंचमी तत्पुरुष) तस्य। **पाषाणपातितैः**–पाषाणैः पातितानि इति पाषाणपातितानि तैः तृतीया तत्पुरुष। **पंचशैः**–पंच षड् वा संख्या येषां तानि पंचषाणि, तैः पंचषै (बहुव्रीहि) **प्रत्यानीतप्राणवृत्तिम्**–प्रत्यानीता प्राणवृत्तिः यस्य सः प्रत्यानीतप्राणवृत्तिः तम् प्रत्यानीतप्राणवृत्तिम् (बहुव्रीहि)। प्रत्यानीत–प्रति+आ+नी+क्त। **वृत्तिः**–वृत्+क्तिन्। **आपाद्य**–आ+पद्+णिच्+ल्यप्। **तरुतलनिषण्णः**–तरोः तलम् (षष्ठी तत्पुरुष) तरुतलम् तरुतले निषण्णः इति तरुतलनिष्णः सप्तमी तत्पुरुष। **निषण्णः**–नि+सद्+क्त। **जरन्तम्**–जृ+शतृ+द्वितीया विभक्ति एकवचन **आपन्ना**–आ+पद्+क्त+टाप् ।

17.2.3 उस बालक एवं अपना परिचय देने के क्रम में राजा पुण्यवर्मा का चरित्रचित्रण

सोऽश्रुगद्गदमगदत्–श्रूयतां महाभाग! विदर्भो नाम जनपदः, तस्मिन्भोजवंशभूषणम्, अंशावतार इव धर्मस्य, अतिसत्त्वः, सत्यवादी, वदान्यः, सुविनीतः, विनेता प्रजानाम्, रंजितभृत्यः, कीर्तिमान्, उदग्रो , बुद्धिमूर्तिभ्याम् उत्थानशीलः, शास्त्रप्रमाणकः, शक्यभव्यकल्पारम्भी, संभावयिता बुधान्, प्रभावयिता सेवकान्, उद्भावयिता बन्धून्, न्यग्भावयिता शत्रून्, असंबद्धप्रलापेष्वदत्तकर्णः, कदाचिदप्यवितृष्णो गुणेषु, अतिनदीष्णः कलासु, नेदिष्ठो धर्मार्थसंहितासु, स्वल्पेऽपि सुकृते सुतरां प्रत्युपकर्त्ता, प्रत्यवेक्षिता कोशवाहनयोः, यत्नेन परीक्षिता सर्वाध्यक्षाणाम्, उत्साहयिता

कृतकर्मणामनुरूपैर्दानमानैः, सद्यः प्रतिकर्त्ता दैवमानुषीणामापदाम्, षाड्गुण्योपयोगनिपुणः, मनुमार्गेण प्रणेता चातुर्वर्ण्यस्य, पुण्यश्लोकः पुण्यवर्मा नामाऽऽसीत्।सः पुण्यैः कर्मभिः प्राप्य पुरुषायुषम्, पुनरपुण्येन प्रजानामगण्यतामरेषु।

शब्दार्थ–

अश्रुगद्गदम्–आँसुओं के कारण रूँधे कण्ठस्वर से। **अगदत्**–कहा, बोला। **श्रूयताम्**–सुनिये। **जनपदः**–जनपद, देश। **तस्मिन्**–उस विदर्भ नामक देश में। **भोजवंशभूषणम्**–भोज के कुल का अलंकार। **धर्मस्य अंशावतार इव**–धर्म के आंशिक अवतार के समान। **अतिसत्त्वः**–महाबलशाली, महापराक्रमी। **वदान्यः**–उदार, दानी। **सुविनीतः**–अत्यन्त विनम्र। **विनेता**–शासक, शासन करने वाला। **रंजितभृत्यः**–नौकरों को हमेशा प्रसन्न रखने वाला। **कीर्तिमान्**–यशस्वी, यश वाला। **उदग्रः**–ऊँचे आचार–विचार वाला। **बुद्धिमूर्तिभ्यामुत्थानशीलः**–उत्थान तथा पुरुषार्थ करने के स्वभाव वाला। **शास्त्रप्रमाणकः**–शास्त्र को प्रमाण मानने वाला। **शक्यभव्यकल्पारम्भी**–आसानी से करने योग्य तथा जनसाधारण लोगों के लिए न्यायपूर्ण कार्यों को करने वाला। **बुधान् संभावयिता**–विद्वज्जनों का सम्मान करने वाला। **सेवकान् प्रभावयिता**–सेवकों पर प्रभाव रखने वाला। **उद्भावयिता**–उन्नति प्रदान करने वाला। **न्यग्भावयिता**–विजय प्राप्त करने वाला अथवा पराभूत करने वाला। **असंबद्धप्रलापेषु**–व्यर्थ की बातों पर। **अदत्तकर्णः**–ध्यान न देने वाला। **नदीष्णः**–कुशलः, निपुण। **कलासु**–कलाओं में। **धर्मार्थसंहितासु नेदिष्ठः**–धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र में हमेशा लगा हुआ। **सुकृते**–किसी से उपकृत होने पर, किसी के द्वारा उपकार किये जाने पर। **सुतरां**–बहुत ज्यादा, अत्यधिक। **प्रत्युपकर्त्ता**–उपकार के प्रति उपकार करने वाला। **प्रत्यवेक्षिता**–सावधान दृष्टि रखने वाला। **सर्वाध्यक्षाणाम्**–मुख्य कर्मचारियों का, सभी अध्यक्षों का। **उत्साहयिता**–उत्साहवर्धन करने वाला। **कृतकर्मणाम्**–कार्यों को सम्पन्न करने वाला का। **सद्यः**–शीघ्र ही। **दैवमानुशीणामापदाम्**–दैव द्वारा मनुष्यों द्वारा उत्पन्न की गई विपदाओं का। **षाड्गुण्योपयोगनिपुणः**–षड्गुणों (सन्धि, विग्रह, यान, आसन, आश्रय तथा द्वैधीभाव) का नियमपूर्वक पालन करने वाला। **मनुमार्गेण**–मनु द्वारा प्रतिपादित विधि से, मनु द्वारा प्रतिपादित मार्ग से। **प्रणेता**–रचयिता, नायक। **पुण्यश्लोकः**–पवित्र यश वाला, कलंकरहित कीर्ति वाला।**पुण्यैः कर्मभिः**–पुण्यकर्मों से। **पुरुषायुषप्राप्यम्**–पुरुष की पूर्ण आयु प्राप्त कर। **अपुण्येन**–प्रजाजनों के पाप या दुर्भाग्य के परिणामस्वरूप। **अमरेषु**–देवताओं में।

अनुवाद –

हे महाभाग! सुनिये। विदर्भ नाम का एक जनपद (देश) है। उसमें भोजवंश का भूषण पुण्यवर्मा नाम का एक राजा था (जो) धर्म का अवतार, अत्यन्त बलशाली, सत्यवादी, दानी, अति विनम्र, प्रजापालक, प्रजा को शिक्षा देने वाला, अपने सेवकों को प्रसन्न रखने वाला, यशस्वी, उन्नतिशील, अपनी बुद्धि तथा शरीर द्वारा (प्रजा की) निरन्तर उन्नति करने वाला, शास्त्र को प्रमाण मानने वाला, जो काम अपने से हो सके, सामान्य जनता के लिए हितकर हो तथा न्याय युक्त हो ऐसे कामों को करने वाला, विद्वानों का सम्मान करने वाला, सेवकों पर प्रभाव रखने वाला, भाई–बन्धुओं को ऊँचा उठाने वाला, शत्रुओं का दमन करने वाला, जिन बातों से अपना कोई प्रयोजन न हो उनको न सुनने वाला, गुणों से कभी भी तृप्त न होने वाला, कलाओं में अत्यधिक निपुण,

धर्मशास्त्र तथा अर्थशास्त्र के अत्यधिक निकट रहने वाला, थोड़ी सी भी उसकी भलाई की जाने पर प्रचुर–प्रत्युपकार करने वाला, कोश तथा वाहन की देखरेख करने वाला, अपने सभी कार्याध्यक्षों पर सावधानी पूर्वक दृष्टि रखने वाला, अनुरूप पुरस्कार तथा सम्मान द्वारा कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ाने वाला, दैवीय तथा मानुषी आपत्तियों को तुरन्त ही शान्त अथवा दूर करने वाला, छः गुणों (सन्धि विग्रह, यान, आसन, आश्रय तथा द्वैधीभाव) का विधिवत् पालन करने में निपुण, मनु द्वारा बतलाये गये चातुर्वर्ण्य (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र) के धर्मों का पालन कराने वाला, पवित्र यश वाला था। वह अपने पुण्यकर्मों से पुरुषायु को प्राप्तकर प्रजाओं के पाप के कारण, देवताओं में जाकर मिल गया।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छ्वास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विश्रुत ने जब वृद्ध व्यक्ति एवं बालक को पानी पिलाकर चैतन्य किया तब उसके होश आने पर या मूर्च्छा टूटने पर अपना परिचय को स्पष्ट करते हुए राजा पुण्यवर्मा के चारित्रिक गुणों को बताते हुए कहा कि–

वह वृद्ध ने बताया कि विदर्भ नाम का जनपद देश है उसमें भोजवंश का भूषण राजा पुण्यवर्मा रहता था जो पवित्र कीर्ति वाला अर्थात् उसका यश गुणों के कारण सर्वत्र व्याप्त था। वह विद्वान्, महाशक्तिशाली, बन्धु–बान्धवों तथा सेवकों पर कृपा करने वाला, प्रजापालक, मनुस्मृति के प्रणेता महाराज मनु के द्वारा बताए गये मार्ग पर चलने वाला और प्रजा जनों से भी मनु प्रतिपादित नियम का पालन कराने वाला, उदार, दानी तथा सम्पूर्ण मानवीय सद्गुणों से सम्पन्न था। प्रस्तुत गद्यांश में 'तात' शब्द सम्मान द्योतक शब्द का प्रयोग किया गया है ,जो अपने से बड़े और श्रद्धेय लोगों के लिए प्रयुक्त होता है। स्नेह, दया या प्रेम को प्रकट करने के लिए अपने से छोटों के प्रति विद्यार्थियों या बच्चों के प्रति भी इस शब्द का प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त विदर्भ नाम जनपद नर्मदा और कृष्णा नदी के बीच में स्थित एक महान राज्य अपने विशाल आकार के कारण यह महाराष्ट्र भी कहा जाता था। आजकल 'बीदर' के नाम से प्रसिद्ध नगर की सम्भवतः इसकी तत्कालीन राजधानी कुण्डिनपुर थी। नलचम्पू के अनुसार कुण्डिनपुर 'वरदा' नदी के किनारे स्थित था।

यहाँ पर भोजवंश का चित्रण प्राप्त होता है जो प्रसिद्ध भोजवंश यादवों के कुल की ही एक शाखा थी। इसके अतिरिक्त राजा को **'अंशावतार इव धर्मस्य'** कहा गया है अर्थात् धर्म की सभी सोलह कलाओं में से एक कला ही मानो शरीर के रूप में अवतरित हुई थी। श्री कृष्ण ही सभी सोलह कलाओं से परिपूर्ण माने जाते हैं। यहाँ अंशावतार के द्वारा पुण्यवर्मा में धर्म के पूर्ण अवतार का निषेध अभिप्रेत है।

अतिनदीष्ण में अति बहुत, अतिशय, अत्यधिक उत्कर्ष आदि अर्थों को प्रकट करता है। नदीष्ण अर्थात् नदियों में स्नान करने वाला, उनके भयानक स्थानों, गहराइयों और प्रवाह को जानने वाला है। दैवीमानुषीणामापदाम्–अर्थात् दैवी और मानुषी आपदाएँ दो प्रकार की आपदाएँ होती है–प्रथम बाढ़ आना, रोग, अकाल आदि दैवी आपदाएँ कही जाती है–**'अग्निजलोपप्वरोग–दुर्भिक्षादयो दैवापदः।** द्वितीय चोर, शत्रु, दुष्ट राजपुरुष आदि की गणना मानुषी आपदाओं की कोटि में की जाती हैं– **चौरशत्रुदुष्टराजपुरुषादयो मानुषापदः।** अमरकोश के अनुसार राजा के अन्दर छः

गुण निम्नलिखित माने गये हैं–

सन्धिर्ना विग्रहो यानमासनं द्वैधमाश्रयः।
षड्गुणाः शक्तयस्तिस्रः प्रभावोत्साहमन्त्रजाः।।

अर्थात् षाड्गुण्य–विदेश नीति में प्रयोग किए जाने वाले **सन्धि, विग्रह ,यान , आसन, द्वैधीभाव** और **संश्रय** है। इसमें **सन्धि**–शत्रु राजा के साथ शान्ति स्थापित करना है तथा **विग्रह**–अपने को शक्तिशाली जानकर की गई सन्धि को तोड़ना है एवं **यान**–युद्ध के लिए सेना सहित प्रयाण करना है और **आसन**–रुक कर आक्रमण के लिए उचित अवसर की प्रतीक्षा करना है। इसके अतिरिक्त **द्वैधीभाव**–शत्रुपक्ष में फूट डालना है तथा **संश्रय**–किसी शक्तिशाली राजा का आश्रय लेना । इन षड्गुणों के प्रयोग से ही एक राजा राजनीति में सफल हो सकता है। परम्परया इतने लोग पुण्यश्लोक अर्थात् पवित्र कीर्ति वाला माने गये है–

पुण्यश्लोको नलो राजा पुण्यश्लोको युधिष्ठिरः।
पुण्यश्लोका च वैदेही पुण्यश्लोको जनार्दनः।।

इस गद्यांश में प्रसादगुण, शान्त एवं अद्भुत रस तथा अनुप्रास अलंकार है। इसकी भाषा शैली सरल है।

व्याकरण–

अश्रुगद्गदम्–अश्रुभिः वाष्पैः गद्गदं यथा स्यात्तथा इति अश्रुगद्गदम्। **अगदत्**–गद्+लङ् प्रथमपुरुष एकवचन। **श्रूयताम्**–श्रु धातु कर्मवाच्य, लोट् लकार प्रथमपुरुष एकवचन। **महाभाग**–महान् भागो यस्य स महाभागः तत्सम्बोधने हे महाभाग (बहुब्रीहि)। **भोजवंशभूषणम्**–भोजस्य वंशः इति भोजवंश (षष्ठी तत्पुरुष) **अंशावतार**–अंशेन अवतारः इति अंशावतारः (तृतीया तत्पुरुष) **कीर्तिमान**–कीर्तिः विद्यते अस्य इति कीर्तिमान्, कीर्ति+मतुप्। **मूर्तिबुद्धिभ्याम्**–मूर्तिश्च बुद्धिश्च इति मूर्तिबुद्धी ताभ्यां मूर्तिबुद्धिभ्याम् (द्वन्द्व) **शास्त्रप्रमाणकः**–शास्त्रं प्रमाणं यस्य सः (बहुब्रीहि) **सम्भावयिता**–सम्+भू+णिच+तृच्। **प्रभावभिता**–प्र+भू+णिच्+तृन्। **उद्भावयिता**– उद्+भू+णिच्+तृन्। **नदीष्णः**–नदी+स्ना+क (आतोऽनुपसर्गे कः)। **प्रत्युपकारकर्त्ता**– प्रति+उप+कृ+तृच् ।**प्रत्यवेक्षिता**–प्रति+अव+ईक्ष्+तृच्। **परीक्षिता**–परि+ईक्ष्+तृच्। **उत्साहयिता**–उत्+सह्+णिच्+तृच्। **प्रतिकर्त्ता**–प्रति+कृ+तृच्। **मनुमार्गेण**–मनोः मार्गः इति मनुमार्गः तेन मनुमार्गेण। **प्रणेता**–प्र+नी+तृच्। **पुण्यश्लोकः**–पुण्यः श्लोकः यस्य सः पुण्यश्लोकः (बहुब्रीहि)।

17.2.4 राजा पुण्यवर्मा के पष्चात् अनन्तवर्मा का राजसिंहासनारुढ़ होना

तदनन्तरमनन्तवर्मा नाम तदायतिरवनिमध्यतिष्ठत्। स सर्वगुणैः समृद्धोऽपि दैवाद्दण्डनीत्यां नात्यादृतोऽभूत्। तमेकदा रहसि वसुरक्षितो नाम मन्त्रिवृद्धः पितुरस्य बहुमत प्रगल्भवागभाषत।

शब्दार्थ–

तदनन्तरम्–पुण्यवर्मा के बाद। **तदायतिः**–पुण्यवर्मा के (पिता) कारण प्रभावशाली या प्रभाव वाला। **अवनिम्**–पृथिवी पर, भूमि पर। **अध्यतिष्ठत्**–बैठा अर्थात् सिंहासनारूढ

हुआ, सिंहासनपर बैठा। **सर्वगुणैः समृद्धः**–सम्पूर्ण गुणों से सम्पन्न, सभी गुणों से समृद्ध होने पर।**दैवात्**–भाग्य से। **दण्डनीत्याम्**–दण्डनीति में अर्थात् राजनीति में, शासन करने में। **नात्यादृतोऽभूत्**–अत्यधिक रुचि रखने वाला नहीं था, शासनकार्य अच्छा नहीं लगता था। **रहसि**–एकान्त में। **बहुमतः**–अत्यन्त आदर का पात्र। **प्रगल्भवाक्**–विश्वास तथा निर्भयता से बोलने वाला, निडर वक्ता।

अनुवाद –

उसके पश्चात् अनन्तवर्मा जिसको (अपने पिता) पुण्यवर्मा से ही प्रभाव प्राप्त हुआ था, पृथिवी राज्य पर बैठा और शासन करने लगा। वह सब गुणों से युक्त होने पर भी दैव योग से राजनीति में अधिक रुचि रखने वाला नहीं था। एक समय उसको एकान्त में ले जाकर उसके पिता द्वारा अत्यधिक सम्मानित तथा अनुभव पूर्ण बातें कहने वाले वृद्ध मंत्री वसुरक्षित ने उससे कहा।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में यह बताया गया है कि राजा पुण्यवर्मा के मर जाने के बाद उसके राजगद्दी पर कौन स्थापित हुआ उसके अन्दर सभी गुण विद्यमान थे किन्तु दुर्भाग्य अनन्तवर्मा की लेशमात्र भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वह सदा नृत्य, गीत, चित्रकर्म, मद्यपान आदि में ही रम जाता था।

पुण्यवर्मा के मर जाने के बाद अनन्तवर्मा राज्यगद्दी पर बैठा, जो सम्पूर्ण राजकीय गुणों से सम्पन्न होते हुए भी अपनी शासन नीति से प्रजा जनों में सम्मान न प्राप्त कर सका। तब एक बार उसके पिता के द्वारा अत्यन्त सम्मानित तथा अनुभवी मन्त्री वसुरक्षित ने उसे एकान्त में ले जाकर उससे कहा वसुरक्षित अनन्तवर्मा का आमात्य था। वह उसके पिता के समय से मन्त्री के रूप में कार्य कर रहा था। अतः उसके मन में राजा तथा राज्य के प्रति स्वाभाविक निष्ठा थी। अनन्तवर्मा की लेशमात्र भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वह सदा नृत्य, गीत, चित्रकर्म, मद्यपान आदि में लिप्त रहता था। वसुरक्षित एक प्रभावशाली वक्ता (प्रगल्लभ वाक्) था। मर्यादा का पालन करने वाला था। यद्यपि आयु में वह ज्येष्ठ था, परन्तु पद की दृष्टि से अनन्तवर्मा का स्थान ऊँचा था। अतः राज्य के हित की कामना से जब वह अनन्तवर्मा को उपदेश देने का निश्चय करता है, तो वह अपेक्षित मर्यादा का पालन करता है। उदाहरणस्वरूप वह उसे सबके सामने कुछ न कहकर एकान्त में उपदेश देता है।

इस गद्यांश में प्रसादगुण, शान्त रस तथा अनुप्रास अलंकार है। पदलालित्य पूर्ण हैं। इसमें शब्द सहज, सरल, सुबोध तथा स्पष्ट है।

व्याकरण–

पुरुषायुषम्–पुरुषस्य आयुः इति पुरुषायुषम्। **अपुण्येन**–न पुण्यम् इति अपुण्यम्, तेन अपुण्येन (नञ् तत्पुरुष)।**तदायतिः**–तस्मात् आयतिः यस्य सः तदायतिः (बहुब्रीहि) **अध्यतिष्ठत्**–अधि+स्था+लङ् लकार प्रथम पुरुष एकवचन। **मन्त्रिवृद्ध**–मन्त्रिषु मन्त्रिणां वा वृद्धः इति मन्त्रिवृद्धः (सप्तमी अथवा षष्ठी तत्पुरुष)। **प्रगल्भवाक्**–प्रगल्भा वाक् यस्य सः प्रगल्भवाक् (बहुब्रीहि)।

17.2.5 राजा अनन्तवर्मा के शासन नीति से असंतुष्ट प्रजा को देखकर मंत्री वसुरक्षित द्वारा उसको अनुभव पूर्ण बातें कहना

'तात! सर्वैवाऽऽत्मसम्पदभिजनात्प्रभृत्यन्यूनैवात्रभवति लक्ष्यते। बुद्धिश्च निसर्गपट्वी, कलासु नृत्यगीतादिषु चित्रेषु च काव्यविस्तरेषु प्राप्तविस्तारा तवेतरेभ्यः प्रतिविशिष्यते। तथाऽप्यसावप्रतिपाद्यात्म संस्कारमर्थशास्त्रेषु, अनग्नि संशोधितेव हेमजाति र्नाति भाति बुद्धिः। बुद्धिहीनः हि भूभृदत्युच्छ्रितोऽपि परैरध्यारुह्यमाणमात्मानं न चेतयते। न च शक्तः साध्यं साधनं वा विभज्य वर्तितुम्। अयथावृत्तश्च कर्मसु प्रतिहन्यमानः स्वैः परैश्च परिभूयते। न चावज्ञातस्याज्ञा प्रभवति प्रजानां योगक्षेमसाधनाय। अतिक्रान्तशासनाश्च प्रजा यत्किंचनवादिन्यो यथाकथं चिद्वर्तिन्यः सर्वाः स्थितिः संकिरेयुः। निर्मर्यादश्च लोको लोकादितोऽमुतश्च स्वाभिनमात्मानं च भ्रंशयते। आगमदीपदृष्टेन खल्वध्वना सुखेन वर्तते लोकयात्रा। दिव्यं हि चक्षुर्भूतभवद्भविष्यत्सु व्यवहितविप्रकृष्टादिषु च विषयेषु शास्त्रं नामाप्रतिहतवृत्ति। तेन हीनः सतोरप्यायतविशालयोर्लोचनयोरन्ध एव जन्तुरर्थदर्शनेष्वसामर्थ्यात्। अतो विहाय बाह्यविद्यास्वभिषङ्गमागयय दण्डनीतिं कुलविद्याम् तदर्थानुष्ठानेन चाऽऽवर्जितशक्तिसिद्धिरस्खलितशासनः शाधि चिरमुदधिमेखलामुर्वीम्' इति।

शब्दार्थ–

सर्वैव–सबके सब, सभी। **आत्मसम्पद्**–अपनी विशेषता, अपनी सम्पदा, व्यक्तिगत गुण। **अभिजनात्**–खानदान से, कुल से, वंश से। **अन्यूना लक्ष्यते**–ज्यादा प्रतीत होती है, अधिक दिखलाई पड़ती है। **निसर्गपट्वी**–स्वभाव से चालाक, स्वभावतः कुशल। **काव्यकलाविस्तरेषु**–काव्यकला के क्षेत्र में। **इतरेभ्यः**–दूसरे लोगों की अपेक्षा, दूसरे अथवा अन्य पुरुषो की तुलना में। **प्रतिविशिष्यते**–आगे हैं, विशिष्ट है, बढ़कर है। **तथाऽप्यसावप्रतिपद्यात्मसंस्कारम्**–फिर भी यह बुद्धि न प्राप्त कर। **प्रतिभाति**–सुन्दर लगती है, सुशोभित होती है। **अत्युच्छ्रितः**–अतिश्रेष्ठ, अतिऊँचा, अत्यन्त उन्नत। **अध्यारुह्यमाणम्**–आक्रमण किया जाता हुआ। **न चेतयते**–नहीं जान पाता है, नहीं समझ पाता है। **वर्तितुम्**–आचरण करने के लिए, व्यवहार करने के लिए। **अयथावृत्तः**–अनुचित आचरण करने वाला, अनुचित प्रकार से व्यवहार करने वाला। **प्रतिहन्यमानः**–विफलता प्राप्त करता हुआ, शत्रुओं से प्रताड़ित होता हुआ। **स्वैःपरिभूयते**–अपने लोगों से अपमानित होता है, आत्मीय लोगों से तिरस्कृत होता है। **अतिक्रान्तशासनाश्च**–शासन अर्थात् राजा के आदेशों तथा नियमों का अतिक्रमण या उल्लघंन करने वाली (जनता)। **यत्किंचनवादिन्यः**–स्वेच्छा से कहने वाली। **यथाकथांचिद्वर्तिन्यः**–स्वेच्छा से आचरण करने वाली। **सर्वाः स्थितिः**–सभी प्रकार की मर्यादाओं की। **संकिरेयु**:–नष्ट करने वाली, नष्ट–भ्रष्ट कर देती है। **व्यवहितप्रकृष्टेषु**–एक–दूसरे से दूर रहने वाले। **अप्रतिहतवृत्तिः**–कभी भी न रुकने वाली वृत्ति अथवा गति वाला। **तेन हीनः**–उस दिव्य नेत्रों से रहित व्यक्ति अर्थात् शास्त्ररूपी नेत्रों से हीन आदमी। **सतोः अपि**–होने पर भी, होते हुए भी। **आयतविशालयो**:–लम्बे और विशाल, **लोचनयो**:–दोनों आँखों के, **अन्ध एव**–अन्धा ही है। **जन्तु**–प्राणी। **अर्थशास्त्रेषु असामर्थ्यात्**–अर्थशास्त्र अर्थात् राजनीति शास्त्र का ज्ञान न होने के कारण। **विहाय**–छोड़कर परित्याग कर। **बाह्यविद्यासु**–बाहरी विद्याओं में, बाहरी अर्थात् अन्य शास्त्रों में। **अभिषङ्गम**–आसक्ति अर्थात् अभिरुचि को। **दण्डनीतिं**–राजनीति को। **स्वकुलविद्याम्**–अपने कुल की विद्या को। **तदर्थानुष्ठेन**–उसके नियमों का अनुसरण अथवा पालन करने से।

आवर्जितशक्तिसिद्धि– शक्तियों की प्राप्त करने वाला। **अरस्खलितशासनः**–अनुल्लंघित शासन वाला अर्थात् प्रजा जिसके आदेशों का उल्लंघन न करे। **उदधिमेखला उर्वीम्**–समुद्र पर्यन्त विस्तृत पृथिवी पर अर्थात् चारों ओर से समुद्ररूपी मेखला (करधनी) से आवृत्त पृथिवी पर।

अनुवाद

हे तात! (प्रियवर) आप में अपने वंश (खानदान) के अनुरूप सभी संपदाएँ (गुण) अत्यधिक रूप से दिखाई पड़ती हैं। नृत्य–गीतादि कलाओं में, चित्र (निर्माण) में तथा शल्य कला में स्वभाव से ही तीक्ष्ण आपकी बुद्धि और लोगों की अपेक्षा अधिक विशिष्ट है तथापि (आपकी बुद्धि) अर्थशास्त्र (राजनीति) में आत्मसंस्कार न पाकर (शिक्षा न पाने के कारण) न तपाये हुए स्वर्ण के समान, अधिक शोभा नहीं देती। बुद्धिरहित राजा अत्युन्नत होने पर भी शत्रु द्वारा आक्रमण किये जाते हुए भी अपने को समझने में समर्थ नहीं होता है। वह साध्य तथा साधन का (समुचित) विभाग कर व्यवहार करने में भी समर्थ नहीं होता। अनुचित रीति से व्यवहार करने वाला राजा (अपने) कार्यों में असफल होता हुआ, अपने तथा अन्य लोगों के द्वारा तिरस्कृत हुआ करता है। उस अवज्ञात (तिरस्कृत) राजा की आज्ञा, प्रजा के योग (अप्राप्त का प्राप्त करना) तथा क्षेम (प्राप्त की सुरक्षा) साधने में समर्थ नहीं होती। (फिर तो) शासन का उल्लंघन (अतिक्रमण) करने वाली प्रजाएँ अपनी इच्छानुसार जो चाहती है वही कहने लगा करती हैं, अपनी इच्छानुसार व्यवहार करने लगा करती हैं तथा अन्त में सम्पूर्ण स्थिति (मर्यादा) को छिन्न–भिन्न (तितर–बितर) कर देती हैं। (पुनः) ऐसी मर्यादाहीन प्रजाएँ इस लोक तथा परलोक दोनों से अपने को तथा (अपने) स्वामी को भ्रष्ट कर देती हैं। लोकयात्रा (जीवन यात्रा) (तो) शास्त्र रूपी दीपक से देखे हुए मार्ग (पर चलने) से (ही) सुखपूर्वक चलती है। वह धर्मशास्त्र दिव्य दृष्टि के समान है जो दृष्टिभूत, वर्तमान, भविष्य तथा एक दूसरे से अलग रहने वाले एवं दूरस्थ विषयों में भी अप्रतिहत गति से पहुँच जाया करती है, कहीं भी रुकती नहीं है। उस (शास्त्र ज्ञान) से रहित प्राणी लम्बे–चौड़े तथा विशाल नेत्रों के होने पर भी अर्थदर्शन (राजनीति) में सामर्थ्य (ज्ञान अथवा योग्यता) न होने के कारण अंधा ही हुआ करता है। अतः आप बाह्य विद्याओं की आसक्ति (रुचि) का त्याग कर अपनी वंश परम्परा की विद्या (दण्डनीति) की ओर ध्यान लगायें तथा सीखें। उसके अर्थों (नियमों) के अनुसार व्यवहार करने से (व्यवहार करके) शक्तिसिद्धि प्राप्त कर बाधाओं से रहित शासन वाला बनकर, चिरकाल तक, समुद्ररूपी करधनी वाली (अर्थात् समुद्र से घिरी हुई) पृथ्वी पर शासन करो।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छ्वास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

प्रस्तुत गद्यांश में राजा अनन्तवर्मा की शासननीति से असंतुष्ट प्रजा को देखकर वृद्ध मंत्री वसुरक्षित द्वारा राजा अनन्तवर्मा को सामाजिक, राजनीति एवं प्रशासनिक शिक्षा सम्बन्धी महत्वपूर्ण ज्ञान प्रदान किया , जिससे वह पृथ्वी पर चिरकाल तक शासन को स्थापित कर सके।

वृद्ध मंत्री वसुरक्षित ने प्रजाजनों के भीतर आक्रोश न उत्पन्न हो इसलिए उन्होंने कुछ शासन सम्बन्धी उचित तथ्यों को बताया जिससे वह नियमों के अनुसार व्यवहार करें तथा शक्ति सिद्धियों को प्राप्त कर, बाधाओं से रहित होकर ,योग– क्षेम का वहन

करने वाला होकर ,शासन से युक्त बहुत देर तक समुद्र रूपी करधनी वाली पृथ्वी पर चिरकाल तक शासन को स्थापित कर सके क्योंकि अनन्तवर्मा आयु में मंत्री वसुरक्षित से छोटा है तथा उसके स्वामी पुण्यवर्मा का पुत्र है, अततः उसे स्नेहवश 'तात' कहकर सम्बोधित करता है। किसी को भी उपदेश देते समय, पहले उसके गुणों की प्रशंसा करना उपदेशक के प्रयोजन को सफल बनाता है। वसुरक्षित चाहता था कि अनन्तवर्मा राजनीति के महत्त्व को समझे और उसकी बातों का आत्मसात् करे। इसलिए वह पहले उसके विद्यमान गुणों और उसकी रुचियों की प्रशंसा करता है फिर वह बड़ी चतुराई से विनम्र शब्दों में राजनीति सम्बन्धी उसकी न्यूनता का बोध कराता है। वह कहता है कि सभी कलाओं में निपुण होने पर भी आप की बुद्धि अग्नि में न तपाये गए सोने के समान अत्यधिक सुशोभित नहीं होती। राजनीति का ज्ञान रखने वाला राजा सदा सफल रहता है किन्तु उसके ज्ञान से रहित राजा चाहे कितना ही महान् क्यों न हो, वह जान नहीं पाता कि शत्रु किस प्रकार उसे अभिभूत करताा जा रहा है। फलस्वरूप वह समय रहते प्रतीकार नहीं कर पाता। न ही वह साध्य और साधन का विभाजन कर सम्यक् रूप से व्यवहार कर पाता है। यानी वह निश्चय ही नहीं कर पाता कि उसका लक्ष्य क्या है और उसकी प्राप्ति कैसे हो सकती है ? अथवा वह यह नहीं जान पाता कि कौन उसके विरुद्ध है और कौन उसके साथ है? शास्त्रविरुद्ध व्यवहार करने वाले को उसके कार्यों में बाधाएँ आती है और वह अपने तथा पराये के द्वारा अपमानित होता है। इस प्रकार तिरस्कृत होने वाला प्रजा के हित के लिए कोई आज्ञा भी देता है, तो उसका कोई पालन नहीं करता। इस प्रकार प्रजा का योगक्षेम सिद्ध नहीं होता। राजा की आज्ञा न मानने वाली प्रजा स्वेच्छानुसार व्यवहार करते हुए सभी मर्यादाओं को दूषित कर देती है। कहने का आशय यह है कि राजा प्रजा दोनों इस लोक में तो कष्ट और अपयश के भागी बनते ही हैं, परलोक में भी कोई सुख प्राप्त नहीं होता।

वसुरक्षित राजा से कहता है कि शास्त्ररूपी दीपक से देखे गए मार्ग से लोकयात्रा सुगम हो जाती है। राजनीति शास्त्र का ज्ञान राजा के लिए दिव्य चक्षु के समान है, जो बिना किसी बाधा के भूत, वर्तमान और भविष्य के गुप्त और परोक्ष विषयों को ग्रहण करने में समर्थ है। जो दिव्यचक्षु से रहित है अर्थात् जो राजनीति के ज्ञान से शून्य है, वह राजा विशाल और लम्बी आँखों के होते हुए भी नेत्रहीन के समान होता है। कहने का आशय यह है कि जिस प्रकार एक नेत्रहीन व्यक्ति संसार में ठोकरें खाता है, उसी प्रकार राजनीति की गूढ़ बातों को न समझ पाने के कारण राजा अपने राज्य को सुचारु रूप से चलाने में स्वयं को असमर्थ पाता है।

इस प्रकार संक्षेप में राजा को राजनीतिक ज्ञान की आवश्यकता के विषय में बताकर वसुरक्षित राजा से अनुरोध करता है कि वह एक राजा के लिए बाह्य विषयों–नृत्य, गीत, वाद्य आदि से अपनी आसक्ति को हटाकर राजनीति में रुचि ले, क्योंकि वही उसकी कुल विद्या है। दण्डनीति का ज्ञान प्राप्त करने से और तदानुसार व्यवहार करने से उसकी शक्तियों में वृद्धि होगी। तब कोई भी उसकी आज्ञा का उल्लङ्घन नहीं करेगा और समुद्ररूपी मेखला वाली पृथिवी पर उसका एकछत्र राज्य होगा।

इस गद्यांश में प्रसादगुण एवं ओजगुण, अनुप्रास एवं उपमा तथा व्यतिरेक अलंकार है। वीर एवं शान्तरस है। पदलालित्य पूर्ण हैं। इसमें शब्द सहज, सरल, सुबोध तथा स्पष्ट है।

व्याकरण–

आत्मसम्पदः–आत्मनः सम्पत् इति आत्म सम्पत् (षष्ठी तत्पुरुष) **अन्यूना**–न न्यूना इति अन्यूना (नञ् तत्पुरुष)। **निसर्गपट्टी**–निसर्गेण पट्वी इति निसर्गपट्वी (तृतीया

तत्पुरुष) **प्राप्तविस्तरेषु**–प्राप्तः विस्तारो यया सा प्राप्तविस्तारा (बहुब्रीहि)। **बुद्धिहीन**–बुद्ध्या हीनः इति बुद्धिहीनः (तृतीया तत्पुरुष)। **अध्यारुहयमाणम्**–अधि+आ+रुह्+कर्मणि शानच्। **योगक्षेमयोः**–योगश्च क्षेमश्च इति योगक्षेमौ तयोः योगक्षेमयोः द्वन्द्वः समास। **प्रतिहन्यमानः**–प्रति+हन+कर्मणि शानच्। **अवज्ञातस्य**–अव+ज्ञा+क्त। **अतिक्रान्तषासना**–अतिक्रान्तानि शासनानि याभिः ताः (बहुब्रीहि)। **निर्मर्यादाः**–निर्गता मर्यादा येभ्यः ते अथवा निर्गताः मर्यादाभ्यः इति निर्मर्यादाः (प्रादि तत्पुरुष)। **व्यवहितविप्रकृष्टेषु**–व्यवहिताश्च विप्रकृष्टाश्च ते व्यवहितविप्रकृष्टाः तेषु (कर्मधारय)। **व्यवहितः**–वि+अव+धा+क्त। **आयतविशालयोः**–आयते च विशाले च इति आयतविशाले तयोः (कर्मधारय)। **अभिशङ्गम्**–अभि+संज्+घञ्। **तदथानुष्ठानेन**–तस्य अर्थाः इति तदर्थाः (षष्ठी पुरुष)। **अनुष्ठानम्**–अनु+स्था+ल्युट्। **शाक्तः**–शास् धातु, लोट लकार मध्यम पुरुष एकवचन। **उदधिमेखलाम्**–उदधिः मेखला यस्याः सा उदधिमेखला ताम् उदधिमेखलाम् (बहुब्रीहि)।

17.2.6 विहारभद्र ने अनन्तवर्मा को राज्योचित व्यवहारोपदेष को पालन न करने से मना करना एवं कवि के द्वारा विहारभद्र के चारित्रिक विशेषणों को स्पष्ट करना

एतदाकर्ण्य 'स्थाने एव गुरुभिरनुशिष्टम्। तथा क्रियते' इत्यन्तः पुरमविशत्। तां च वार्तां पार्थिवेन प्रमदासन्निधौ प्रसङ्गेनोदी रितामुपनिशम्य समीपोपविष्ट श्चिन्तानुवृत्तिकुशलः प्रसादवित्तो गीतनृत्यवाद्यादिश्ववाह्यो बाह्यनारीपरायणः पटुरयन्त्रितमुखः बहुभङ्गिविशारदः परममीन्वेषणपरः परिहासयिता, परिवादरुचिः, पैशुन्यपण्डितः, सचिवमण्डलादप्युत्कोचहारी सकलदुर्नयोपाध्यायः कामतन्त्रकर्णधारः कुमारसेवको विहारभद्रो नाम स्मितपूर्वं व्यज्ञापयत्।

शब्दार्थ–

स्थाने एव–ठीक ही, उचित ही। **गुरुभिः**–गुरुजनों के द्वारा, आपके द्वारा। **अनुशिष्टम्**–उपदेश दिया गया। **तथा क्रियते**–ऐसा ही किया जायेगा। **अन्तःपुरम**–रनिवास, रानियों का आवासीय महल। **पार्थिवेन**–राजा के द्वारा, राजा अनन्तवर्मा के द्वारा। **प्रमदासन्निधौ**–स्त्रियों के समीप, महिलाओं के पास। **प्रसङ्गेन**–चर्चा के दौरान, बातचीत में। **उदीरिताम्**–कही गई, अभिव्यक्त की गई, बताई गयी। **उपनिशम्य**–सुनकर।**समीपोपविष्ट**–समीप में बैठा हुआ, पास में स्थित। **चित्तानुवृत्तिकुशलः**–राजा की इच्छानुसार चलाने में दक्ष, भूपति की अभिलाषा के अनुकूल चलाने में कुशल। **प्रसादवित्तः**–राजा की अनुकम्पा से प्रसिद्ध। **बाह्यनारीपरायणः**–अन्य स्त्रियों में आसक्त अथवा वेश्यादि दूसरी स्त्रियों से प्रेम करने वाला।**अयन्त्रितमुखः**–स्वेच्छा से भाषण करने वाला, अपनी इच्छानुसार बोलने वाला। **बहुभङ्गिविशारदः**–व्यंग्यपूर्ण बातों को कहने में प्रवीण।**परमर्मान्वेषणपरः**–दूसरों के अवगुणों अर्थात् दोषों को खोजने में चालाक।**परिहासयिता**–परिहास करने वाला, हँसाने वाला, मनोविनोद करने वाला। **परिवादरुचिः**–दूसरे लोगों की निन्दा करने तथा सुनने में रुचि रखने वाला। **पैशुन्यपण्डितः**–चुगली करने में कुशल। **उत्कोचहारी**–घूसखोर, गुप्त तरीके से धन लेने वाला। **दुर्नयोपाध्यायः**–अनर्थो का आचार्य।**कामतन्त्रकर्णधारः**–कामशास्त्र का चतुर, ज्ञानी, कामशास्त्र का अच्छा ज्ञान रखने वाला। **कुमारसेवकः**–कुमारावस्था से ही राजा की सेवा में लगा हुआ। **स्मितपूर्वं**–मुस्कुराते हुए। **व्यज्ञापयत्**–बोला, कहा।

अनुवाद –

यह (वृद्ध मन्त्री वसुरक्षित के उपर्युक्त उपदेश) को सुनकर (अनन्तवर्मा ने कहा)– हे मन्त्रिवर! आपने ठीक ही उपदेश दिया है, इसका पालन किया जायेगा।' इस प्रकार कहकर (उसने) अन्तःपुर में प्रवेश किया। महिलाओं के समीप (स्थित) राजा (अनन्तवर्मा) द्वारा प्रसंगवश कहे गये उस (बूढ़े मन्त्री के उपदेश को) सुनकर पास में ही स्थित राजा की मनोवृत्ति का अनुसरण करने में प्रवीण, (राजा की) अनुकम्पा पर ही जिसकी वृत्ति आधारित थी या (राजा का) विशेष कृपापात्र, गीत–नृत्य तथा वाद्य आदि में कुशल, दूसरी स्त्रियों में अनुरक्त रहने वाला (अथवा वेश्यागमन करने वाला) दक्ष, मनचाहा बोलने वाला, व्यंग्यपूर्ण बातें कहने में चतुर, दूसरे के रहस्यों को खोजने में तत्पर रहने वाला, मनोविनोद करने वाला, दूसरों की निन्दा करने में तत्पर रहने वाला, चुगली करने में कुशल, मन्त्रिमण्डल के लोगों से घूस लेने वाला, सभी प्रकार के अनर्थों का आचार्य, कामशास्त्र का मर्मज्ञ, कुमारावस्था से (सेवा करता हुआ) राजा का सेवक विहारभद्र मुस्कराते हुए बोला।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में राजा अनन्तवर्मा अपने वृद्ध मंत्री वसुरक्षित की बातों से सहमत होता है और वह कहता है कि गुरुतुल्य आपके द्वारा सम्यक् उपदेश दिया गया है। आज से मैं आपके उपदेश के अनुसार ही व्यवहार करुँगा किन्तु उसका धूर्त सेवक विहारभद्र ने अपनी गलत मन्त्रणा से उसे पथभ्रष्ट बना दिया और जिसके कारण वह नृत्य, वाद्य, मद्यपान तथा भोग विलास में डूब गया। इसके साथ ही कवि ने सेवक विहारभद्र की चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट किया है।

राजा अनन्तवर्मा ने अपने वृद्ध मंत्री के अनुकरणीय उपदेश को सुनकर उसका पालन न करते हुए रानियों के महल में प्रवेश किया और वहाँ पर उसकी मनोव्यथा को जानकर उसके भ्रष्ट एवं धूर्त सेवक विहारभद्र ने अनुचित एवं कुमार्गगामी उपदेश के द्वारा उसे उचित मार्ग से विचलित कर पथभ्रष्ट कर दिया। क्योंकि विहारभद्र राजा के बाल्यकाल से ही उसका सेवक था। वह मन के भावों को जानने में कुशल तथा राजा का कृपापात्र था। नृत्य, गीत और वादन आदि में अत्यधिक निपुण था। परस्त्रियों में रुचि रखने वाला था । वह चतुर और मुँहफट था। अनेक प्रकार के वक्र भाषणों में प्रवीण था। वह दूसरे के दोषों को ढूँढने में तत्पर, हँसाने वाला, परनिन्दा में आनन्दित होने वाला और दूसरों की चुगली करने में निपुण था। मन्त्रिमण्डल से भी घूस लेने वाला था। सारे दुष्टकर्मों का आचार्य और कामशास्त्ररूपी नौका का कर्णधार था।

इस गद्यांश में माधुर्य एवं प्रसादगुण है। इसमें अनुप्रास अलंकार है। श्रृंगार एवं शान्तरस है। पदलालित्य पूर्ण हैं। इसमें शब्द सहज, सरल, सुबोध तथा स्पष्ट है।

व्याकरण–

प्रमदासन्निधौ–प्रमदानां सन्निधिः इति प्रमदासन्निधिः तस्मिन् (षष्ठी तत्पुरुष)। **अबाह्या**–न बाह्यः इति अबाह्यः (नञ् तत्पुरुष)।**बाह्यनारीपरायणः**–बाह्याश्च ताः नार्यः, तासु परायणः इति बाह्यनारीपरायणः (सप्तमी पुरुष)।**अयंत्रितमुखः**–न यंत्रितमुखः इति अयंत्रितमुखः (नञ् तत्पुरुष)। **परिहासयिता**– परि+हस्+णिच्+तृच्। **परिवादरुचिः**–

परिवादे रुचिः यस्य सः (बहुब्रीहि)। **पैशुन्यपण्डितः**—पैशुन्ये पण्डितः (सप्तमी तत्पुरुष)। **उत्कोचहारी**—उत्कोच+हृ+णिनि।**व्यज्ञापयत्**—वि+ज्ञा+णिच्+लङ् प्रथमपुरुष एकवचन।

17.2.7 अनन्तवर्मा को विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के परिप्रेक्ष्य में ईषद्हास्य भरे वाक्य कहना

देव ! दैवानुग्रहेण यदि कश्चिद् भाजनं भवति विभूतेः, तमकस्माद्च्चावचैरुपप्रलोभनैः कदर्थयन्तः स्वार्थं साधयन्ति धूर्ताः। तथाहि ! केचित्प्रेत्य किल लभ्यैरभ्युदयातिशयैराशामुत्पाद्य, मुण्डयित्वा शिरः, बद्ध्वादर्भरज्जुभिः, अजिनेनाच्छाद्य, नवनीतेनोपलिप्य, अनशनं च शयित्वा, सर्वस्वं स्वीकरिष्यन्ति। तेभ्योऽपि घोरतराः पाखण्डिनः पुत्रदारशरीर जीवितान्यपि मोचयन्ति। यदि कश्चित्पटुजातीयो नास्यै मृगतृष्णिाकायै हस्तगतं त्युक्तमिच्छेत्, तमन्ये परिवार्याहुः—एकामपि काकिणीं कार्षापणलक्षमापादयेम, शस्त्रादृते सर्वशत्रून् घातयेम, एकशरीरिणमपि मर्त्यं चक्रवर्तिनं विदधीमहि, यद्यस्मदुद्दिष्टेन मार्गेणाचर्यते, इति।

शब्दार्थ—

दैवानुग्रहेण—भाग्य के अनुग्रह से, भाग्य या दैव की कृपा से। **भाजनम्**—पात्र। **विभूतेः**—विभूति का, ऐश्वर्य का, सम्पदा का।**अकस्मात्**—अचानक, बिना किसी कारण के। **उच्चावचैः**—ऊँची—नीची विभिन्न तरह की। **उपप्रलोभनैः**—लोभों से, लालचों से। **कदर्थयन्तः**—पीड़ित करते हुए। **केचित्प्रेत्य**—कोई मर करके। **लभ्यै**—मिलने वाले, प्राप्त होने वाले। **अभ्युदयातिशयै**—ऐश्वर्य की अधिकता से अत्यधिक उन्नति से। **मुण्डयित्वा शिरः**—मुंडन करा करके। **बद्ध्वा**—बाँध करके। **दर्भररज्जुभिः**—कुशों की रस्सियों से। **अजिनेन**—काले हिरण के चमड़े से। **आच्छाद्य**—ढककर। **नवनीतेन**—मक्खन से। **उपलिप्य**—पोतकर। **अनशनं**—बिना भोजन के। **शयित्वा**—सुलाकर। **सर्वस्वम्**—सब कुछ। **स्वीकरिष्यन्ति**—स्वीकार कर लेंगे। **तेभ्य अपि घोरतराः**—उनकी अपेक्षा और भी अधिक भयंकर। **पाखण्डिनः**—धूर्त, पाखण्डी लोग **जीवितानि**—प्राणों को। **मोचयन्ति**—छुड़ा लेते है।**पटुजातीयः**—चतुर विरादरी का आदमी। **मृगतृष्णिकायैः**—मृगतृष्णा अर्थात् झूठी आशाओं के लिए। **हस्तगतम्**—हाथ में आये हुए। **त्युक्तम्**—परित्याग करने के लिए। **अन्ये**—दूसरे राजनीतिज्ञ। **परिवार्यः**—चारों तरफ से घेरकर। **काकिणीम्**—कौड़ी को। **कार्षापणलक्षम्**—एक लाख कार्षापण। **आपादयेम**—कर सकते है। **शस्त्रात्ऋते**—शस्त्र के बिना ही।**घातयेम**—मरवा सकते हैं। **एकशरीरिणमपिमर्त्यं**—ऐसा व्यक्ति जिसके पास केवल शरीरमात्र है।**विदधीमहि**—बना दे।**अस्मदुद्दिष्टेन मार्गेण**—हमारे द्वारा बताये गये रास्ते से। **आचर्यते**—आचरण किया जाता है।

अनुवाद —

हे देव! यदि भाग्य की कृपा से कोई आदमी ऐश्वर्य का पात्र बन जाता है तो अचानक ही धूर्त लोग उसे ऊँचे—नीचे (अर्थात् अनेक तरह के) लालचों से पीड़ित करते हुए (या उसकी निन्दा करते हुए) अपना स्वार्थ सिद्ध करते रहते हैं। उदाहरणार्थ—कोई तो मरने के बाद मिलने वाले ऐश्वर्यों की आशा पैदा कर, शिर का बाल मुँडवाकर, कुश की रस्सी बाँधकर, काले हिरण के चमड़े को ओढ़कर, मक्खन से उसे पोतकर, बिना भोजन कराये सुलाकर (उसका) सब कुछ ले लेते हैं। उनसे भी ज्यादा पाखण्डी लोग उसके उसके पुत्र, स्त्री, शरीर और प्राण तक का परित्याग करवा दिया करते हैं। यदि

कोई चालाक आदमी इस मृगतृष्णा (मिथ्या आशा) के लिए हाथ में स्थित धन को नहीं छोड़ना चाहता (या उनको देना नहीं चाहता) तो दूसरे लोग उसे घेरकर कहते हैं कि यदि हमारे द्वारा बताये गये रास्ते पर चला जाय तो (हम) एक कौड़ी को भी एक लाख कार्षापण बना सकते हैं, शस्त्र के बिना ही सभी शत्रुओं को मरवा सकते हैं, किसी शरीर मात्र धारण करने वाले आदमी को भी चक्रवर्ती (राजा) बना सकते हैं।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहार भद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश की छटा दर्शनीय है। इसमें अनन्तवर्मा को विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के परिप्रेक्ष्य को ईशद्हास्य भरे वाक्य कहता है।

वसुरक्षित के चले जाने के बाद उसके साथ हुए वार्तालाप को जब राजा अनन्तवर्मा अन्तःपुर की स्त्रियों को बता रहा था, तो पास में बैठा हुआ विहारभद्र सारी बात सुन लेता है। वह परजीवी प्रकृति का पुरुष था। उसे चिन्ता होती है कि यदि राजा भोग–विलासों को छोड़कर राजनीति में रुचि लेने लगेगा, तो उसका क्या होगा ? स्वार्थ से वशीभूत होकर वह राजा को विपरीत शिक्षा देने लगता है। वह कहता है कि हे देव, यदि दैवकृपा से कोई ऐश्वर्य का पात्र बनता है तो धूर्त जन अनेक प्रकार के प्रलोभनों से दुःखी करते हुए अपने प्रयोजनों को सिद्ध करते हैं। जैसे–कुछ व्यक्ति मरने के बाद प्राप्त होने वाले विशिष्ट अभ्युदय की आशा मन में उत्पन्न कर, सिर को मुण्डवाकर, कुश की रस्सी से बाँधकर, मृगचर्म पहनाकर, मक्खन से मालिश कर, बिना भोजन के सुलाकर उसकी सारी सम्पत्ति हस्तगत कर लेते हैं। कुछ क्रूर पाखण्डी उनसे भी बढ़कर होते हैं। वे तो व्यक्ति से उसके पुत्र, पत्नी, शरीर और यहाँ तक कि प्राणों को भी छुड़वा देते हैं। यदि कोई बुद्धिमान् व्यक्ति इस मृगतृष्णा के लिए अपनी सम्पति का परित्याग नहीं करना चाहता तो अन्य धूर्तगण उसे घेर लेते हैं, उससे कहते है कि यदि हमारे द्वारा बताए हुए मार्ग पर चला जाय तो हम एक कौड़ी को एक लाख कार्षापण में बदल दें। बिना शस्त्र के सारे शत्रुओं को मरवा दें। एक अकेले व्यक्ति को भी चक्रवर्ती सम्राट बनवा दें। इस प्रकार अपनी चतुराई से वह उसे वशीभूत कर लेते हैं।

इस गद्यांश में प्रसाद गुण, अनुप्रास, अतिशयोक्ति तथा विषमालंकार है। अद्भुत एवं शान्त रस है।

व्याकरण–

दैवानुग्रहेण–दैवस्य अनुग्रहः इति दैवानुग्रहः तेन (षष्ठी तत्पुरुष)।**उच्चावचैः**–उदञ्चि अनाञ्चि च इति उच्चावचानितैः। **सर्वस्वम्**–सर्वं च तत् स्वं च इति सर्वस्वम् (कर्मधारय)। **पुत्रदारशरीरजीवितानि**–पुत्राश्च दाराश्च, शरीरं च जीवितं च इति पुत्रदाराशरीरजीवितानि (द्वन्द्व समास)। **शस्त्रात् ऋते**–ऋते के योग में यहाँ 'शस्त्र' शब्द में पंचमी का प्रयोग हुआ है।**विदधीमहि**–वि+धा+विधिलिङ् लकार, उत्तमपुरुष बहुवचन।

17.2.8 सेवक विहारभद्र द्वारा दण्डनीति को बुरा बताते हुए उसे पालन न करने का सुझाव देना

स पुनरिमान्प्रत्याह–'कोऽसौ मार्गः' इति। पुनरिमे ब्रुवते 'ननु चतस्त्रो राजविद्याः- त्रयी, वार्तान्वीक्षिकी दण्डनीतिरिति। तासु तिस्त्रस्त्रयीवार्तान्वीक्षिक्यो महत्यो मन्दफलाश्च तास्तावदासताम्। अधीश्व तावद्दण्डनीतिम्। इयमिदानीमाचार्यविष्णुगुप्तेन मौर्यार्थे षड्भिः श्लोकसहस्रैः संक्षिप्ता। सैवेयमधीत्य सम्यगनुष्ठीयमाना यथोक्तकर्मक्षमा' इति।स 'तथा ' इत्यधीते श्रृणोति च। तत्रैव जरां गच्छति। तत्तु किल शास्त्रं शास्त्रान्तरानुबन्धि। सर्वमेव वाङ्मयमविदित्वा न तत्त्वतोऽधिगंस्यते। भवतु कालेन बहुनाऽल्पेन वा तदर्थाधिगतिः। अधिगतशास्त्रेण चादावेव पुत्रदारमपि न विश्वास्यम्। आत्मकुक्षेरपि कृते तण्डुलैरियद्भिरियानोदनः संपद्यते। इयत ओदनस्य पाकायैतावदिन्धनं पर्याप्तमिति मानोन्यानपूर्वकं देयम्।

शब्दार्थ–

ब्रुवते–कहते हैं।**चतस्त्रः राजविद्याः**–चार प्रकार की राजविद्यायें। **मन्दफला**–थोड़ा परिणाम देने वाली। **तास्तावदासताम्**–पहले वे बैठी रहें। **अधीश्व**–अध्ययन करो। **विष्णुगुप्त**–चाणक्य का दूसरा नाम। **मौर्या**–सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए। **शड्भिः श्लोकसहस्रैः**–छः हजार श्लोकों से। **सैवेयमधीत्य**–वही अध्ययन कर, पढ़कर। **सम्यगनुष्ठीयमाना**–अच्छी प्रकार से आचरण में लायी गयी। **यथोक्तकर्मक्षमा**–कहे गये अर्थात् अभीप्सित फल देने में समर्थ हुआ करती है। **स**–वह राजा। **तथा इति**–ऐसा ही होगा, इस प्रकार कहकर।**अधीते**–पढ़ता है। **जराम्**–वृद्धावस्था। **शास्त्रान्तरानुबन्धि**–अन्य शास्त्रों के अनुसार आचरण करने वाला। **वाङ्मयम्**–शास्त्र, साहित्य। **अविदित्वा**–न जानकर। **तत्त्वतः**–तात्त्विक रूप से। **भवतु**–हो। **कालेन बहुनाऽल्पेन वा**–बहुत अथवा थोड़े समय के मनुष्य के द्वारा। **पुत्रदारम्**–पुत्र तथा स्त्री। **न विश्वस्यम्**–विश्वास नहीं करना चाहिए। **आत्मकुक्षे**–अपनी कोख के। **कृते**–लिए। **तण्डुलै**–चावलों से।**संपद्यते**–बनता है। **इयत ओदनः**–इतना भात। **पाकाय**–पकाने के लिए। **एतावत् इन्धनम्**–इतना ईन्धन।**मानोन्यानपूर्वकम्**–नाप–तौलकर। **देयम्**–दिया जाना चाहिए।

अनुवाद –

यदि उस धूर्त पाखण्डी की इन बड़ी–बड़ी लुभावनी बातों पर विश्वास करके कोई यह पूछता है कि आपका यह कौन–सा रास्ता है? तो पुनः वे धूर्त कहते हैं–'निश्चित रूप से राजविद्यायें चार प्रकार की होती हैं–(1) त्रयी (ज्ञान, कर्म, उपासना) की दृष्टि से तीनो वेद ऋक्, यजुः, साम। (2) वार्ता (गुप्तचर–विषयक शास्त्र या अर्थशास्त्र) (3)आन्वीक्षिकी (न्यायशास्त्र) (4)दण्डनीति–(राजनीति)। इनमें से पहले तीन (त्रयी, वार्ता तथा आन्वीक्षिकी) तो अत्यन्त श्रमसाध्य हैं और थोड़ा फल प्रदान करने वाली हैं, इस कारण इन्हें रहने दो (अर्थात् इन्हें जानने की कोई आवश्यकता नहीं है) पहले राजनीति पढ़ो। इस समय यह (राजनीति) आचार्य चाण्क्य द्वारा चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए षट् सहस्र श्लोकों में संक्षिप्त बनायी गई है। वही इसको पढ़कर अच्छी तरह से आचरण में लायी जाती हुई, जैसा कहा गया है वैसा फल प्रदान करने में सक्षम होगी।वह (धनी व्यक्ति) 'ठीक है' ऐसा कहकर (वह दण्डनीति) पढ़ने तथा सुनने लगता है। इसी में वह वृद्धावस्था को प्राप्त हो जाता है। (जब वह शिष्य दण्डनीति के मंथन से घबराता

है तो धूर्त उसे समझाता है) वह शास्त्र अन्य शास्त्रों से सम्बन्धित है, या थोड़े समय में उसकी प्राप्ति हो भी गयी तो शास्त्र (दण्डनीति अथवा राजनीति) पढ़ लेने वाले (व्यक्ति) के द्वारा सर्वप्रथम , पुत्र तथा स्त्री भी विश्वास योग्य नहीं रह जाती है। अपने पेट के लिए भी इतने चावलो से इतना भात तैयार होता है, इतने भात को पकाने के लिए इतना ईंधन पर्याप्त है', इस भाँति तौल–नापकर (वस्तुएँ) दी जाने लगा करती है।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में भी राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहारभद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्ग गामी उपदेश की छटा दर्शनीय है। विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि यदि उस धूर्त पाखण्डी की इन बड़ी–बड़ी लुभावनी बातों पर विश्वास करके कोई यह पूछता है कि आपका यह कौन–सा रास्ता है? तो उसको स्पष्ट करते हुए कहता है कि निस्सन्देंह चार राज विद्याएँ–त्रयी (तीनों वेद), वार्ता (कृषि और वाणिज्य से सम्बन्धित ज्ञान), आन्वीक्षिकी (तर्कशास्त्र) और दण्डनीति (अर्थशास्त्र)। उनमें से प्रथम तीनों बहुत विस्तृत और अल्पफलप्रदायिनी हैं इसलिए उन्हें छोड़कर केवल दण्डनीति का ही अध्ययन करना चाहिए। आचार्य चाणक्य ने चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए राजनीति के सभी सिद्धांतो को छह हजार श्लोकों में संक्षिप्त कर दिया है। इसको पढ़कर और तदनुसार व्यवहार करने से उपर्युक्त सभी कार्यों की सिद्धि होती है। इस प्रकार विहारभद्र अनन्तवर्मा को चार प्रकार के राजविद्याओं और आचार्य चाणक्य द्वारा चन्द्रगुप्त मौर्य के लिए षट्सहस्र श्लोकों में प्रणीत शास्त्र को पालन करने हेतु निषिद्ध बताकर उसे अनुचित एवं कुमार्गगामी बातों को कहता है। वह भी उनकी आज्ञा मानकर उस शास्त्र को पढ़ता है और सुनता है। उसको पढ़ते हुए ही वह किस अवस्था को प्राप्त हो जाता है। इतना ही नहीं इस शास्त्र को समझने के लिए अन्य सम्बद्ध वाक्यों का अध्ययन भी आवश्यक हो जाता है। राजनीति शास्त्र को पढ़ने से व्यक्ति का चिन्तन किस प्रकार प्रभावित होता है, इसका वर्णन करते हुए विहारभद्र कहता है कि इस शास्त्र को जानने वाला सर्वप्रथम अपनी पत्नी और पुत्र पर ही अविश्वास करने लगता है। अपनी उदरपूर्ति के लिए भी वह, इतने चावलों से इतना भात बनेगा और इतने भात को पकाने में इतना ईंधन लगेगा, इस प्रकार से गणना करने लगता है।

इस गद्यांश में प्रसाद गुण, शान्तरस, अनुप्रास एवं काव्यलिङ्ग अलंकार है। यथोक्त कर्मफल देने में चाणक्य की दण्डनीति कारण है अतः काव्यलिङ्ग अलंकार है। इसका लक्षण है–**'हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्गं निगद्यते।**

व्याकरण–

मन्दफलाः–मन्दं (स्वल्पं) फलं प्राप्ताः यासां ता, मन्दफलाः (बहुब्रीहि)।**आसताम्**–आस् धातु लोट् लकार प्रथम पुरुष बहुवचन। **संक्षिप्ता**–सम्+क्षिप्+क्त+टाप्। **अनुष्ठीयमाना**–अनु+स्था+कर्माणि शानच्+टाप्।**यथोक्त कर्मक्षमा**–यथोक्तम् च तत् कर्म इति यथोक्तकर्म क्षमा (कर्मधारय)।

17.2.9 कवि दण्डी ने दण्डनीति के अन्तर्गत सेवक विहारभद्र के द्वारा राजा की दिनचर्या का वर्णन

उत्थितेन च राज्ञा क्षालिताक्षालिते मुखे मुष्टिमर्धममुष्टिं वाऽभ्यन्तरीकृत्य कृत्सनमायव्यजातमहनः प्रथमेऽष्टमे वा भागे श्रोतव्यम्। श्रृण्वत एवास्य द्विगुणमपहरन्ति तेऽध्यक्षधूर्त्ताः। चत्वारिंशतं चाणक्योपदिष्टानाहरणोपायान्सहस्रधात्मबुद्ध्यैव ते विकल्पयितारः। द्वितीयेऽन्योन्यं विवदमानानां प्रजानामाक्रोशाद्दह्यमानकर्णः कष्टं जीवति। तत्रापि प्राड्विवाकादयः स्वेच्छया जयपराजयौ विवादघनाः पापेनाकीर्त्या च भर्तारमात्मानश्चार्थैर्योजयन्ति। तृतीये स्नातुं भोक्तुं च न लभते। भुक्तस्य यावदन्धः परिणामस्तावदस्य विषभयं न शाम्यत्येव। चतुर्थे हिरण्यप्रतिग्रहाय हस्तं प्रसारयन्नेवोत्तिष्ठति। पंचमे मन्त्रचिन्तया महान्त मायासमनुभवति। तत्रापि मन्त्रिणो मध्यस्था इवान्योन्यं संभूय, दोषगुणौ दूतचारवाक्यानि शक्याशक्यतां देशकालकार्यावस्थांच स्वेच्छया विपरिवर्त्तयन्तः, स्वपरमित्रमण्डलान्युपजीवन्ति। बाह्याभ्यन्तरांश्च कोपान् गूढमुत्पाद्य प्रकाशं प्रशमयन्त इव स्वामिनमवशमवगृहणन्ति। षष्ठे स्वैरविहारो मन्त्रो वा सेव्यः। सोऽस्यैतावन्स्वैरविहारकालो यस्य तिस्त्रस्त्रिपादोत्तरा नाडिकाः । सप्तमे चतुरङ्गबलप्रत्यवेक्षणप्रयासः। अष्टमेऽस्य सेनापतिसखस्य विक्रमचिन्ताक्लेशः।

शब्दार्थ–

उत्थितेन–खड़े राजा से। **क्षालिताक्षालिते**–धोये अथवा न धोये हुए। **मुष्टिमर्धममुष्टिं**–आधी मुट्ठी।**अभ्यन्तरीकृत्य**–भीतर करके, पेट में डालकर। **कृत्स्नम्**–पूरा। **आयव्ययजातम**–आय तथा व्यय का समूह। **अहनः प्रथमेऽष्टमे भागे**–दिन के पहले आठवें भाग में। **श्रोतव्यम्**–सुनना चाहिए। **श्रृण्वन्**–सुनते हुए।**अस्य**–इसके। **द्विगुणम**–दोगुना।**चाणक्योपदिष्टान्**–चाणक्य के द्वारा उपदिष्ट। **आत्मबुद्ध्या एव**–अपनी बुद्धि के द्वारा ही। **विकल्पयितारः**–कल्पना कर लेगे या बना लेगे।**द्वितीयोऽन्योन्यं**–दिन के दूसरे आठवें भाग में अर्थात् सात बजे से नव बजे तक। **विवदमानां**–झगड़ा करने वाली।**प्रजानाम्**–प्रजाजनों का। **आक्रोषात्**–आक्रोश से। **दह्यमानकर्ण**–जलते रहने वाले कानों से युक्त राजा के। **कष्टम्**–कष्ट के साथ। **तत्रापि**–उन विवादों में भी। **प्राड्विवाकादयः**–ऐसे अधिकारीगण जो आरोप लगाने वाले तथा आरोपित दोनों पक्षों से प्रश्न पूछकर अपना निर्णय सुनाते थे। **स्वेच्छया**–अपनी इच्छा के अनुसार। **जयपराजयौ**–जय या पराजय। **विदधानाः**–करते हुए। **पापेन**–पाप से। **अकीर्त्या**–अपयश से। **भर्तारमात्मानष्चार्थैर्योजयन्ति**– अधिकारी गण राजा को ही पाप का भागी बनाते हैं और उसकी बदनामी भी करते हैं। **भुक्तस्य**–भोजन कर चुके हुए राजा का। **अन्धः परिणामः**–अन्न का अथवा भोजन का पच जाना। **विषभयम्**–विष से भय। **न शाम्यति**–शान्त नहीं होता है। **चतुर्थे**–साढ़े दस बजे से साढ़े बारह बजे तक। **हिरण्यप्रतिग्रहाय**–स्वर्ण अर्थात् धन लेने के लिए। **प्रसारयन्नेव**–फैलाये हुए ही। **उत्तिष्ठति**–खड़ा होता है। **पंचमे**–बारह से डेढ़ बजे तक। **चिन्तया**–चिन्ता से। **मध्यस्थ इव**–उदासीन लोगों के समान। **शक्याशक्यताम्**–शक्य और अशक्य का। **देशकालकार्यावस्थाः**–देश काल तथा कार्यों की परिस्थितियों का। **विपरिवर्त्तयन्तः**–हेर–फेर करते हुए। **स्वपरमित्रमण्डलानि**–अपने मित्रों तथा शत्रुओं की मण्डली को। **उपजीवन्ति**–जीवन निर्वाह अथवा जीवन–यापन किया करते है। **बाह्याभ्यन्तरांश्च कोपान्**–बाहरी और भीतरी विवादों या झगड़ो को। **गूढम**–गुप्त ढंग

से। **प्रकाशम**–स्पष्ट रूप से। **अवशम**–अपने वश में न होकर परवश। **अगृहणन्ति**–अपमानित किया करते हैं।**षष्ठे**–छठे पहर में अर्थात् डेढ़ से तीन बजे तक। **स्वेरविहारः**–अपनी इच्छा के अनुसार **आमोद**–प्रमोद करना। **मन्त्रो वा सेव्यः**–अथवा राजकीय अधिकारियों के साथ **विचार**–विमर्श करे। **सप्तमे**–सायं तीन बजे से चार बजे तक। **चतुरङ्गबलप्रत्यवेक्षणप्रयासः**–चतुरंङ्गिणी सेना के निरीक्षण का प्रयास। **अष्टमे**–आठवें प्रहर अर्थात् सायं चार बजे से छः बजे तक। **सेनापतिसखस्य**–सेनापति के साथ।

अनुवाद –

(सूर्योदय से पूर्व) उठकर राजा को धुले अथवा न धुले मुख में ही, एक अथवा आधी मुट्ठी (अन्न) अन्दर करके (पेट में डालकर) राज्य के सम्पूर्ण आय–व्यय का हिसाब दिन के पहले आठवें पहर में (सुनना चाहिए) सुनना पड़ा करता है। चाणक्य द्वारा बताये गये हुए, चोरी के चालीस प्रकार के उपायों को अपनी बुद्धि से हजारों प्रकार का बना लेने वाले वे धूर्त (अध्यक्ष) उस (राजा) के सुनते दूना धन अपहरण कर (ही) लिया करते हैं। दूसरे प्रहर में परस्पर लड़ती–झगड़ती हुई प्रजाओं के शोरगुल से (राजा का) कान जल (सुनते–सुनते) जातें है। (और इस भाँति वह) कष्टपूर्वक जीता है। वहाँ भी न्यायकर्त्ता (अफसर लोग) अपनी इच्छानुसार, जीत तथा हार के फैसलों को सुनाते हुए राजा को पाप तथा अपकीर्ति से और अपने को धन से जीत लेते हैं (अर्थात वे अफसर लोग खूब रिश्वत ले लेकर अपन घर भरते हैं तथा बेचारा राजा व्यर्थ में ही अपयश और पाप का भागी बना करता है)। तृतीय प्रहर में स्नान तथा भोजन कर पाता है। खाना खाने के पश्चात् भी जब तक अन्न का पाचन नहीं हो जाता तब तक उसके (राजा) मन से विष का भय शान्त नहीं होता है (अर्थात् जब तक भोजन ठीक रूप में पच नहीं जाता तब तक राजा के मन में यह चिन्ता लगी ही रहा करती है कि कहीं किसी ने भोजन में विष तो नहीं मिला दिया)। चतुर्थ प्रहर में स्वर्ण अर्थात् कर के रूप में (राज–कर) लेने के निमित्त उसे हाथ फैलाये हुए ही उठना (खड़ा होना) पड़ा करता है। पाँचवें में विचार–विमर्श की चिन्ता (मन्त्रियों से सलाह लेने की चिन्ता) से अत्यन्त कष्ट का अनुभव करना पड़ता है। वहाँ भी मन्त्री मध्यस्थ लोगों के सदृश, आपस में मिलकर, दोष तथा गुणों को, राजदूतों तथा गुप्तचरों की बातों को अपनी इच्छा के अनुसार परिवर्तित करते हुए (राजा का उल्टा–सीधा समझते हुए) अपने बाहरी तथा भीतरी क्रोधों (झगड़ों) को छिपे हुए रूप में उत्पन्न कर प्रकट रूप में (झगड़ों) को शान्त सा करते हुए राजा को विवश करके अपने चंगुल में फँसाये (उलझाये) रखा करते हैं।(राजा को) छठे पहर में या तो अपनी इच्छानुसार मनोरंजन करना चाहिए अथवा मन्त्रियों आदि से विचार–विमर्श करना चाहिए। उनके मनोरंजन करने का समय तीन नाड़ी होती है। सातवें पहर में चतुरङ्गिणी सेना का निरीक्षण करने का प्रयास करना पड़ता है। आठवें पहर में सेनापति के साथ पराक्रम–प्रदर्शन की चिन्ता का कष्ट उठाना पड़ता है।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

विहारभद्र कहता है कि इस गद्यांश में भी राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहार भद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश की छटा दर्शनीय है। इस गद्यांश में राजा के दिनचर्या (द्वितीय से लेकर आठवें पहर तक) का वर्णन किया है–

जागने के पश्चात् राजा धुले अथवा बिना धुले मुख से एक या आधा मुट्ठी अन्न पेट के अन्दर डालकर नगर (मुष्टि) और गाँव (अर्द्धमुष्टि) के आय की पड़ताल करके समस्त आय और व्यय को दिन के पहले आठवें भाग में सुनता है। उसके सुनते हुए ही धूर्त अध्यक्ष गण दुगना धन हड़प कर लेते हैं। चाणक्य ने धनसंग्रह के चालीस उपाय बतलाए हैं, लेकिन वे धूर्त उन चालीस उपायों को हजारों प्रकार का बना लेते हैं। इस प्रकार वे राजा को ठगते है। प्रजाजनों के रोज–रोज के झगड़े और एक दूसरे पर आरोप लगाकर चिल्लाना आदि को सुन–सुनकर राजा के कान मानो जल जाते है, जिसके कारण उसे बहुत कष्ट होता है। न्यायालय में राजा के साथ प्राङ् नामक अधिकारी बैठते थे, जो वादी–प्रतिवादी से प्रश्न पूछकर फैसला देते। इन्हीं के फैसलों को राजा मान्यता देता था, परन्तु ये अधिकारी धन आदि लेकर अपनी इच्छा से किसी भी व्यक्ति के पक्ष में फैसला कर देते थे, लेकिन बदनामी राजा की होती थी। ये अधिकारी जिसे चाहते जिता देते। राजा को कार्यों एवं योजनाओं को कर्मचारी उलटा–पुलटा समझाते थे अर्थात् जो हानिप्रद होता था, उसे लाभप्रद समझाते थे। राजा भोजन करने के बाद जब तक वह पच नहीं जाता था, उसे किसी के द्वारा भोजन में विष दिये जाने की आंशका बनी रहती थी–

यानैः शय्यासने पाने भोज्ये वस्त्रे विभूषणे।
सर्वत्रैवाप्रमत्तः स्याद् वर्जयेद् विषदूषितम्।।

इस प्रकार धूर्त अधिकारीगण येन–केन प्रकारेण राजा को अपने वश में किये ही रहते थे। तीसरें आठवें भाग में राजा को स्नान एवं भोजन के लिए समय प्राप्त होता है। जब तक भोजन पूरी तरह पचता नहीं है, वह विष के भय से ग्रस्त रहता है।

चौथे आठवें भाग में सुवर्ण के लिए हाथ फैलाता हुआ ही उठ खड़ा होता है। पाँचवें अष्टम भाग में राजनीति सम्बन्धी मन्त्रणा से महान् कष्ट का अनुभव करता है। यहाँ भी मन्त्रीगण ऊपर से तो तटस्थ बने रहते हैं, किन्तु वस्तुतः एक दूसरे से मिले हुए होकर अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए दोषों और गुणों को, दूतों और गुप्तचरों के सन्देशों को, सम्भव और असम्भव को तथा स्थान, समय और कार्य की स्थितियों को अपनी इच्छा से बदलते हुए अपने राज्य के और शत्रुपक्ष के मित्रवर्ग से धन प्राप्त करते हैं। अपने राज्य में और सीमा पर गुप्तरूप से विवादों को उत्पन्न करके प्रकट रूप में उनको शान्त सा करते हुए स्वामी को वश में कर लेते हैं। छठा–आठवा भाग इच्छानुसार मनोविनोद अथवा मन्त्रणा के लिए निश्चित होता है। इतना ही समय उसे विनोद के लिए प्राप्त होता है। सातवें भाग में उसे अपनी चार अंगों वाली सेना के निरीक्षण का कष्ट उठाना पड़ता है। आठवें में इसे सेनापति के साथ पराक्रम सम्बन्धी चिन्ता का दुःख होता है।

इस गद्यांश में प्रसाद गुण, अनुप्रास अलंकार एवं अद्भुत रस है। राजा के सुनते–सुनते धूर्त कर्मचारी दुगुना धन चोरी कर ही लिया करते हैं–में अद्भुत रस है। राजा के सुनते हुए धन चोरी नहीं होनी चाहिए अर्थात् कारण के न रहने पर भी कार्य हो रहा है अतः विभावना अलंकार भी है–**'विभावना तु विना हेतुं कार्योत्पत्तिर्यदुच्यते।'**इस गद्यांश में प्रसाद एवं ओज गुण तथा अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा एवं काव्यलिंग अलंकार एवं भयानक तथा शान्त रस है।

संस्कृत व्याकरण–

सर्वशास्त्रानुबन्धि–सर्वाणि च तानि शास्त्राणि इति सर्वशास्त्राणि (मयूर व्यंसकादि)। तानि अनुबध्नाति तच्छीलम् इति शास्त्रानुबन्धि। **अविदित्वा**– नञ्+विद्+क्त्वा।

अधिगम्यते–अधि+गम्+कर्मणि लृट् ।**बहुना अल्पेन वा कालेन**–यहाँ 'अपवर्गे तृतीया' नियम से तृतीया विभक्ति का प्रयोग हुआ है ।**अधिगत शास्त्रेण**–अधिगतानि शास्त्राणि येन सः अधिगत शास्त्रः तेन (बहुब्रीहि) ।**पुत्रदारम्**–पुत्राश्च दाराश्च एतेषां समाहारः पुत्रदारम्। **विश्वास्यम्**–वि+शस्+णिच्+ण्यत् ।**आत्मकुक्षेः**–आत्मनः कुक्षिः इति आत्मकुक्षिः तस्य आत्मकुक्षेः (षष्ठी तत्पुरुष)। **देयम्**–दा+यत्। **विवदमानानां**–वि+वद्+शानच्+ आम्+टाप्। **आक्रोशात्**–आ+क्रुश्+घञ् पंचमी विभक्ति एकवचन। **दह्यमानकर्णः**– दह्यमानौ कर्णौ यस्य सः (बहुब्रीहि)। **भुक्तस्य**–भुक्तं अस्यास्तीतिः भुक्तः, तस्य भुग्+क्त+ङस्। **परिणामः**–परि+नम्+घञ्। **सुविषभयम्**–विषात् भयम् इति विषभयम् (पंचमी तत्पुरुष) ।**हिरण्यप्रतिग्रहाय**–हिरण्यस्य प्रतिग्रह इति हिरण्यप्रतिग्रहः तस्मै (षष्ठी तत्पुरुष समास) ।**विपरिवर्त्तयन्तः**–वि+परि+वृत्+ शतृ+जश्। **प्रशमयन्तः**–प्र+शम्+णिच्+शतृ+जश्।

17.2.10 विहारभद्र के द्वारा राजा के रात्रिचर्या का वर्णन

पुनरुपास्यैव सन्ध्यां, प्रथमे रात्रिभागे गूढपुरुषा द्रष्टव्याः। तन्मुखेन चातिनृशंसाः शस्त्राग्निरसप्रणिधयोऽनुष्ठेयाः। द्वितीये भोजनानन्तरं श्रोत्रिय इव स्वाध्यायमारभेत। तृतीये तूर्यघोषेण संविष्टश्चतुर्थपंचमौ शयीत किल। कथमिवास्याजस्त्रचिन्तायासविह्वलमनसो वराकस्य निद्रासुखमुपनमेत् । पुनः षष्ठे शास्त्रचिन्ताकार्यचिन्तारम्भः। सप्तमे तु मन्त्रग्रहो दूताभिप्रेषणानि च । दूताश्च नामोभयत्र प्रियाख्यानलब्धानर्थान् वीतशुल्कनिराबाधं वणिज्यया वर्धयन्तः कार्यमविद्यमानमपि लेशेनोत्पाद्यानवरतं भ्रमन्ति।

शब्दार्थ

गूढपुरुषा–गुप्तचरः लोग। **तन्मुखेन**–उन दूतों के मुख से। **चातिनृशंसाः**–अत्यन्त निर्दय। **शस्त्राग्निरसप्रणिधयोऽनुष्ठेयाः**–शस्त्र से प्रहार करने वालो। **द्वितीये**–रात के दूसरे पहर में। **श्रोत्रियः इव**–वेदाध्ययन करने वाले छात्रों के समान। **स्वाध्यायम्**–वेदाध्ययन या बह्य का चिंतन। **तृतीये**–तीसरे पहर अर्थात् 9 से 10 बजे तक। **तूर्यघोषेण**–तुरही आदि वाद्यों की आवाज के साथ। **संविष्टः**–सोया हुआ ।**चतुर्थपंचमौ शयीत**–चौथे और पाँचवें पहर अर्थात् 10 से 1 बजे तक सोना चाहिए। **कथम इव**–**कैसे। अस्य**–इस राजा के। **अजस्त्रचिन्तायासविह्वलमनसः**–अनवरत चिन्ता के कष्ट से व्याकुल मन वाला राजा। **निद्रासुखम्**–नींद का सुख। **मन्त्रग्रहः**–मन्त्रियो से विचार–विमर्श करना। **दूताभिप्रेषणानि**–दूतों को भेजना। **प्रियाख्यानलब्धनर्थान्**–प्रिय बातें कहकर प्राप्त किये गये धन को। **वीतशुल्कबाधवर्त्मनि**– शुल्क देने की बाधा से रहित मार्ग से। **वणिज्यया**–व्यापार से। **वर्धयन्तः**–बढ़ाते हुए। **लेशेन**–चोरी अथवा छल से। **अनवरतम्**–लगातार ।**दुस्वप्नः**–दुष्ट स्वप्न ।**अभ्येत्य**–पास जाकर ।**सौवर्णमेव**–सोने का बना हुआ। **होमसाधनम्**–होम करने का सामान। **गुणवद्**–लाभप्रद।

अनुवाद –

पुनः सायंकालीन सन्ध्योपासन करके रात के पहले पहर में गुप्तचरों को देखना चाहिए और उन्हीं के द्वारा अत्यन्त निर्दय, दुराचारियों के शस्त्राघात, आग लगाकर हानि करने वालों और विष देने वालों की गुप्त चेष्टाओं के प्रतीकार के लिए दूतों की नियुक्ति की जानी चाहिए। दूसरे पहर में भोजन करने के बाद वह वेदाध्यन करने वाले छात्रों के समान अध्ययन करे। तीसरे पहर में तुरही आदि वाद्य यन्त्रों के घोष के साथ चौथे

और पाँचवें पहर तक शयन करे। लगातार चिन्ता के दुःख से व्याकुल उस विचारे (राजा को निद्रा का सुख किस प्रकार मिले? छठें प्रहर में शास्त्रों एवं कार्यों योजनाओं की चिन्ता) करने का श्रीगणेश हो जाता है। सातवें पहर में मन्त्रियों के साथ विचार–विमर्श करके दूतों को भेजने का कार्य आ जाता है तथा दूतगण दोनों स्थानों पर (अपने राजा तथा दूसरे राजा) प्रिय बातों को कहकर प्राप्त किये गये धन को शुल्क (देने) की बाधा से रहित रास्ते से व्यापार द्वारा वृद्धि को प्राप्त करते हुए, कार्यरत होने पर भी छल–कपट (चोरी) से नये–नये कार्यों को उत्पन्न कर (या कार्यों की व्यवस्था कर) लगातार भ्रमण करते रहते हैं।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में भी राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहार भद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश की छटा दर्शनीय है। विहारभद्र अपनी चिकनी–चुपड़ी बातों के माध्यम से शास्त्र द्वारा बताये गये प्रतिरात्रि के आठों प्रहरों के कार्य को स्पष्ट करते हुए उसे उनका पालन न करने हेतु प्रेरित करता है।

दिन के समान रात्रि के भी आठ भाग माने गए हैं। शास्त्रकारों द्वारा राजा के लिए निर्धारित किए गए क्रिया–कलापों का वर्णन विहारभद्र राजा से करते हुए कहता है कि शास्त्रज्ञों के अनुसार रात्रि के प्रथम (आठवें) भाग में गुप्तचरों से मिलना चाहिए और उनके माध्यम से अत्यन्त क्रूर, शस्त्र, अग्नि और विष का प्रयोग करने वाले लोगों को नियुक्त करना चाहिए। दूसरे भाग में भोजन के पश्चात् वेदपाठी ब्राह्मण के समान शास्त्र का स्वाध्याय करना चाहिए। तीसरे भाग में तूर्यघोष के साथ लेटकर चौथे और पाँचवें (भागों) में सो पाता है।

एक राजा की स्थिति पर दुःख प्रकट करता हुआ विहारभद्र कहता है कि निरन्तर चिन्ता के कष्ट से व्याकुल मन वाले इस बेचारे को निद्रासुख कैसे मिल सकता हैं। फिर रात्रि के छठे भाग में शास्त्र और कर्तव्य की चिन्ता प्रारम्भ हो जाती है। सातवें भाग में मन्त्रचिन्तन और दूतों को भेजने का कार्य होता है और दूत जो हैं वह दोनों पक्षों से मधुर और अनुकूल बातें कर धन प्राप्त करता है। उस धन को वह शुल्क की बाधा से रहित मार्गों पर व्यापार के द्वारा बढ़ाता हुआ अविद्यमान कार्य को भी अल्प प्रयास से उत्पन्न करके बढ़ाते रहते हैं।

इस गद्यांश में प्रसादगुण, अदभुत रस एवं अनुप्रास अलंकार है। चिन्ता के कारण राजा को नीद न आने में काव्यलिंग अलंकार भी है।

संस्कृत व्याकरण–

निद्रासुखम्–निद्रायाः सुखम इति निद्रा सुखम् (षष्ठी तत्पुरुष)। **दूताभिप्रेषणानि**–दूतानां अभिप्रेषणानि इति (षष्ठी तत्पुरुष) **।क्रियाख्यान लब्धान्**–प्रियं च तदाख्यानं इति प्रियाख्यानम् (कर्मधारय) तैः लब्धाः इति प्रियाख्यान लब्धा (तृतीया तत्पुरुष) तान् **।वाणिज्यया**–वणिजः भावः वाणिज्यम् तया **।वर्धयन्तः**–वृध्+णिच्+शतृ+प्रथमा विभक्ति के बहुवचन का रूप **।उत्पाद्य**–उत्+पद्+णच्+ल्यप्।

बोध प्रश्न–1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें–

I. राजकुमार विश्रुत की सर्वप्रथम भेट किससे हुई? (अनन्तवर्मा /प्रवेशवर्मा)

II. राजा पुण्यवर्मा कौन था? (राजा अनन्तवर्मा का पिता/राजा अनन्तवर्मा का मंत्री)

III. राजा अनन्तवर्मा का मंत्री कौन है? (वसुरक्षित/विहारभद्र)

बोध प्रश्न–2

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

I. विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा का ..... था। (सेवक/मंत्री)

II. नालीजंग्घ ..... था। (प्रवेशवर्मा का सेवक/ अनन्तवर्मा का सेवक)

III. विहारभद्र..... था। (कुटिल सेवक/विनम्र सेवक)

बोध प्रश्न 3

1. दण्डी के द्वारा विश्रुतचरितम् में वर्णित राजा की दिनचर्या के प्रथम भाग को बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

2. दण्डी के द्वारा विश्रुतचरितम् में वर्णित राजा की दिनचर्या के द्वितीय भाग को बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

1. राजा पुण्यवर्मा का चरित्र–चित्रण कीजिए।

17.3 सारांश

प्रथम परिच्छेद में राजकुमार विश्रुत ने अपने विन्ध्याटवी पर्यटन के दौरान बालक को देखा और उसके रक्षक एक वृद्ध पुरुष को कुएँ से बाहर निकाला गया। द्वितीय परिच्छेद में राजकुमार विश्रुत के द्वारा वृद्ध से उसका तथा उस बालक का परिचय पूछा गया। तृतीय परिच्छेद में उस वृद्ध ने उस बालक का परिचय देते हुए उसके पितामह राजा पुण्यवर्मा का परिचय दिया गया। चतुर्थ परिच्छेद में पुण्यवर्मा की मृत्यु

के बाद उस बालक के पिता अनन्तवर्मा के सिंहासनारुढ़ होने का वर्णन प्राप्त हुआ। पंचम परिच्छेद में अनन्तवर्मा की राजनीति से असंतुष्ट लोगों को देखकर उसके वृद्ध मंत्री वसुरक्षित ने उससे एकांत में राज्य संचालन हेतु अनुभवपूर्ण बात कही । षष्ठ परिच्छेद में विहारभद्र नामक सेवक उससे उस उपदेश का पालन न कर अपनी इच्छानुसार इन्द्रियजनित सुखों को भोगने के लिए कहता है तथा कवि ने कुटिल सेवक विहारभद्र के विशेषणों को प्रस्तुत किया गया। सप्तम परिच्छेद में कवि ने सेवक विहारभद्र से कुटिलता पूर्वक शास्त्रकारों द्वारा प्रदत्त राज्योनुचित उपदेश को स्पष्ट किया। अष्टम परिच्छेद में दण्डी ने दण्डनीति के उपदेश को सेवक विहारभद्र के द्वारा राजा को दिलवाया तथा उसे ऐसा न करने को मना किया। नवम परिच्छेद में कवि दण्डी ने विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के अर्न्तगत राज्योचित राजा की दिनचर्या का वर्णन किया। दशम परिच्छेद में कवि दण्डी ने विहारभद्र के द्वारा दण्डनीति के अर्न्तगत राज्योचित राजा के रात्रिचर्या के सप्तम भागों का वर्णन किया गया , आपको इसका ज्ञान प्राप्त हुआ।

17.4 शब्दावली

उपदेश	–	शिक्षा
दिनचर्या	–	दिन में पालन करने योग्य आचरण
रात्रिचर्या	–	रात में पालन करने योग्य आचरण
समुचित	–	उचित
कर्तव्य	–	कार्य
सेवक	–	सेवा करने वाला
पर्यटन	–	भ्रमण

17.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- विश्रुतचरितम् (संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित) सम्पादक एवं व्याख्याकार, डॉ॰ विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन, जयपुर
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार डॉ॰ शशिशेखर चतुर्वेदी , चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार मीनाकुमारी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस , शक्तिनगर दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि' चौखम्बा , भारती अकादमी
- संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद

17.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) प्रवेशवर्मा (ii) राजा अनन्तवर्मा का पिता (iii) वसुरक्षित

बोध प्रश्न–2

2. (i) सेवक (ii) प्रवेशवर्मा का सेवक (iii) कुटिल सेवक

बोध प्रश्न 3

1 (सूर्योदय से पूर्व) उठकर राजा को धुले अथवा न धुले मुख में ही, एक अथवा आधी मुट्ठी (अन्न) अन्दर करके (पेट में डालकर) राज्य के सम्पूर्ण आय–व्यय का हिसाब दिन के पहले आठवें पहर में (सुनना चाहिए) सुनना पड़ा करता है। चाणक्य द्वारा बतलाये गये हुए, चोरी के चालीस प्रकार के उपायों को अपनी बुद्धि से हजारों प्रकार का बना लेने वाले वे धूर्त (अध्यक्ष) उस (राजा) के सुनते दुगना धन अपहरण कर (ही) लिया करते हैं।

2 दूसरे प्रहर में परस्पर लड़ती–झगड़ती हुई प्रजाओं के शोरगुल से (राजा का) कान जल (सुनते–सुनते) जाता है। (और इस भाँति वह) कष्टपूर्वक जीता है। वहाँ भी न्यायकर्त्ता (अफसर लोग) अपनी इच्छानुसार, जीत तथा हार के फैसलों को सुनाते हुए राजा को पाप तथा अपकीर्ति से और अपने को धन से जीत लेते हैं (अर्थात वे अफसर लोग खूब रिश्वत ले लेकर अपन घर भरते हैं तथा बेचारा राजा व्यर्थ में ही अपयश और पाप का भागी बन जाता है।

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 18 विश्रुतचरितम् (11–15 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 गद्यांश की अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

- 18.2.1 अनन्तवर्मा को विहारभद्र का उपदेश
- 18.2.2 विहारभद्र द्वारा नीतिशास्त्रकारों की निंदा
- 18.2.3 विहारभद्र का अनन्तवर्मा को स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव
- 18.2.4 अनन्तवर्मा द्वारा मंत्री वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा
- 18.2.5 वसुरक्षित द्वारा तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय

18.3 सारांश

18.4 शब्दावली

18.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

18.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

18.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप–

- विश्रुतचरितम् (11–15 परिच्छेद तक) अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण से परिचित हो जायेंगे।
- परिच्छेद 11 में सेवक विहारभद्र रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है। राजा अनन्तवर्मा से वह कहता है कि शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं है। इच्छानुसार भोग कीजिए। इसका ज्ञान हो पायेगा।
- परिच्छेद–12 में विहारभद्र अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है। अतः वह नीतिशास्त्रकारों की निंदा करते हुए कहता है कि नीति शास्त्रकार वह नियम तो बना देते है लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं करते, इसको जानेंगे ।
- परिच्छेद–13 में सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा को राज्य का भार मंत्री आदि पर छोड़कर स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव देता है, इसको जानेंगे ।
- परिच्छेद–14 में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है, इसको जानेंगे ।
- परिच्छेद–15 में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों के याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया, इसको जानेंगे ।

18.1 प्रस्तावना

प्रिय छात्रों! पिछली इकाई में आपने 1–10 परिच्छेद तक का अध्ययन किया और प्रस्तुत इकाई संख्या 18 में आप विश्रुतचरितम् के 11–15 परिच्छेद तक अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण का अध्ययन करेंगे । परिच्छेद 11 में रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है, इसके पश्चात् दिन में किए जाने वाले कार्य किये जाते है। राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं है, इच्छानुसार भोग करिए। परिच्छेद 12 में विहारभद्र अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है अतः वह नीतिशास्त्रकारों की निंदा करते हुए कहता है, ''वह नियम तो बना देते है लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं करते''। परिच्छेद 13 में सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा को राज्य का भार मंत्री आदि पर छोड़कर स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव देता है। परिच्छेद 14 में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है। परिच्छेद 15 में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों को याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया तथा मनुष्य के जीवन में इसका कितना महत्त्व है, इन सब विषयों को समझने में सरलता होगी।

18.2 गद्यांश की अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण

18.2.1 अनन्तवर्मा को विहारभद्र का उपदेश

अष्टमे पुरोहितादयोऽभ्येत्यैनमाहुः 'अद्य दृष्टो दुःस्वप्नः। दुःस्था ग्रहाः, शकुनानि चाशुभानि। शान्तयः क्रियन्ताम्। सर्वमस्तु सौवर्णमेव होमसाधनम्। एवं सति कर्म गुणवद् भवति। ब्रह्मकल्पा इमे ब्राह्मणाः। कृतमेभिः स्वस्त्ययनं कल्याणतरं भवति। ते चामी कष्टदारिद्र्या बहवपत्या यज्वानो वीर्यवन्तश्चाद्याप्यप्राप्तप्रतिग्रहाः। दत्तं चैभ्यं स्वर्ग्यमायुष्यमरिष्टनाशनं च भवति' इति बहु–बहु दापयित्वा तन्मुखेन स्वयमुपांशु भक्षयन्ति। तदेवमहर्निशमविहितसुखलेशमायासबहुलम् विरलकदर्थनं च नयतो नयज्ञस्यास्तां चक्रवर्तिता स्वमण्डलमात्रमपि दुरारक्ष्यं भवेत्। शास्त्रज्ञसमज्ञातो हि यद् ददाति, यन्मानयति, यत् प्रियं ब्रवीति, तत्सर्वमभिसंधातुमित्यविश्वासः। अविश्वास्यता हि जन्मभूमिरलक्ष्म्याः। यावता च नयेन विना न लोकयात्रा स लोकत एव सिद्धः। नात्र शास्त्रेणार्थः। स्तनंधयोऽपि हि तैस्तैरुपायैः स्तनपानं जनन्या लिप्सते, तदपास्मातियन्त्रणा–मनुभूयन्तां यथेष्टमिन्द्रियसुखानि।

शब्दार्थ–

ब्रह्मकल्पा–बह्म के समान। **स्वस्त्ययनम्**–मंगल स्तुति। **कष्टदारिद्र्यवन्तः**–कष्ट और दरिद्रता वाले लोग। **बह्वपत्या**–बहुत सन्तानों से सम्पन्न। **यज्वानः**–यज्ञ करने वाले लोग। **वीर्यवन्तः**–पराक्रमशाली। **अद्यापि**–आज भी। **अप्राप्तप्रतिग्रहाः**– दान प्राप्त नहीं करने वाले। **स्वर्ग्यम्**–स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला। **आयुष्यम्**–आयु की वृद्धि करने वाला। **अरिष्टनाशनम्**–दुर्भाग्य को नष्ट करने वाला। **बहु–बहु**–बहुत अधिक। **दापयित्वा**–प्रदान कर। **तन्मुखेन**–उनके द्वारा। **अविदितसुखलेशम्**–सुख का लेशमात्र भी न जानने वाले। **आयासबहुलम्**–अत्यधिक कष्ट से भरा हुआ।

अविरलकदर्थनम्–लगातार परेशान होते हुए। **नयज्ञस्य**–नीति अथवा राजनीति जानने वाले राजा की। **चक्रवर्तिता**–चक्रवर्ती बनना। **दुरारक्ष्यम्**–अत्यन्त कठिनता से रक्षा की जाने वाली। **शास्त्रज्ञसमज्ञातः**–राजनीतिज्ञशास्त्र के ज्ञानी के रूप में प्रसिद्ध। **अति संधातुम्**–ठगने के लिए। **अविश्वास्यता**–विश्वास का न किया जाना। **अलक्ष्म्याः**–निर्धनता की दरिद्रता की। **लोकयात्रा**–जीवनयात्रा। **सिद्धः**–मिल जाता है। **अर्थः**–उद्देश्य, प्रयोजन।। **तैस्तै**–उन–उन। **अनुभूयन्ताम्**–अनुभव की जाय। **यथेष्टम्**–अपनी इच्छा से। **इन्द्रियसुखानि**–इन्द्रियों के सुखो को।

अनुवाद –

आठवें पहर में पुरोहित आदि उसके (राजा के) समीप आकर बोलते हैं–आज मैंने एक अत्यन्त बुरा स्वप्न देखा है? इस समय नक्षत्र खराब स्थान पर स्थित हैं तथा शकुन भी अशुभ हुए हैं, इसलिए (यज्ञादि के द्वारा इनकी) शांति की जानी चाहिए। होम (यज्ञानुष्ठान) की पूरी सामग्री सोने की हो, ऐसा होने पर काम (परिणाम) सार्थक हो जाता है।ये ब्राह्मण ब्रह्म के समान हैं। इनके द्वारा किया गया मांगलिक अनुष्ठान अत्यन्त कल्याणप्रद होगा। ये कष्ट तथा दरिद्रता भोग रहे हैं, ये अनेक बाल–बच्चों वाले, यज्ञ करने वाले (अत्यन्त) पराक्रमी हैं तथा इन्होंने आज तक (किसी से) दान भी नहीं लिया हैं। इनको दिया गया दान स्वर्ग को प्रदान कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला तथा दुर्भाग्य का नाशक होगा। इस प्रकार कहकर बहुत–सा धन दिलाकर उनके द्वारा स्वयं ही छिपकर खा लिया जाता हैं। तब इस प्रकार दिन–रात थोड़ा भी सुख प्राप्त किये बिना कष्टों से भरा हुआ, लगातार कष्टों से परिपूर्ण जीवन–यापन करने वाले नीतिज्ञ राजा का चक्रवर्ती बनना तो दूर ही रहा, (उस राजा के लिए तो) अपने राज्य की ही रक्षा करना कठिन हो जाता है। शास्त्रज्ञ के रूप में प्रसिद्ध लोग जो भी (शास्त्रानुसार) परामर्श देते हैं, जो (कुछ भी) राजा का सम्मान करते हैं, जो भी मधुर वाणी बोलता है, (चिकनी–चुपड़ी) बातें बनाते हैं–ये सभी (कार्य उन सीधे–सादे राजाओं को) ठगने के लिए होता है, अतः उन पर विश्वास नहीं होता है। (अपने ऊपर लोगों का) विश्वास न होना दरिद्रता की जन्मभूमि है। जितनी नीति के बिना लोकयात्रा (जीविका) नहीं चल पाती, उतनी नीति तो संसार से ही मालूम हो जाती है। उसके लिए शास्त्र से क्या प्रयोजन? अर्थात् शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। (अपनी माता का) स्तनपान करने वाला शिशु उन–उन साधनों अर्थात् अनेक उपायों से अपनी माता के स्तनों से दूध प्राप्त कर लेता है, इसलिए अत्यधिक कष्टों (बाधाओं) का परित्याग कर अपनी इच्छा के अनुसार सुखों का भोग कीजिए।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विहारभद्र सेवक होते हुए राजा अनन्तवर्मा से रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है। तथा यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में एवं शास्त्र से क्या प्रयोजन है? इसको वर्णित करता है। उसके अनुसार राजा को शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं होती है। इसलिए अत्यधिक कष्टों (बाधाओं) का परित्याग कर अपनी इच्छा के अनुसार सुखों का भोग करिये।

रात्रि के आठवें भाग में पुरोहित आदि उसके पास आकर कहते हैं कि आज बुरा स्वप्न देखा है। ग्रहों की स्थिति प्रतिकूल है। शकुन बुरे हैं। इसके लिए शान्तिकर्म करना

चाहिए। इसमें सभी पात्र यदि सोने के हों तो परिणाम अत्यन्त उत्तम होगा। उस यज्ञ को कराने वाले ब्राह्मणों के विषय में वे राजा से कहते हैं कि ये ब्रह्मा के समान हैं इनके द्वारा किया गया स्वस्ति पाठ अत्यधिक कल्याणकारी होता है। ये घोर दरिद्रता से पीड़ित और बहुत अधिक सन्तानों वाले हैं। यज्ञ को करने में इन तेजस्वी ब्राह्मणों ने आज तक किसी से दान नहीं लिया है। इनको दिया गया दान स्वर्ग की प्राप्ति कराने वाला, आयु की वृद्धि करने वाला और अनिष्ट का नाश करने वाला होता है। इस प्रकार की बातों से राजा को अभिभूत कर उन ब्राह्मणों को खूब दान–दक्षिणा दिलवाते हैं और गुप्त रूप से उनसे अपना हिस्सा लेते हैं। विहारभद्र अनन्तवर्मा से कहता है कि इस प्रकार दिन–रात थोड़े से भी सुख से रहित और परिश्रम की अधिकता से निरन्तर पीड़ित होकर समय बिताते राजा की चक्रवर्तिता तो रही, अपने राज्य मण्डलमात्र की रक्षा करना भी कठिन हो जाता है। इसका कारण वह बतलाता है कि शास्त्रज्ञों की अनुमति से वह जो कुछ दान देता है, जो भी सम्मान देता है, जो भी प्रिय बोलता है, उसकी उन सभी क्रियाओं को लोग सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। इस प्रकार अविश्वास राजलक्ष्मी के अभाव का कारण बनता है।

पूर्ण चतुराई से वह राजा को समझाता है कि लोकव्यवहार के लिए जितने ज्ञान की आवश्यकता होती है, उसे तो मनुष्य संसार में स्वयं ही अनुभव से सीख लेता है, इसके लिए शास्त्रों के अध्ययन की कोई आवश्यकता नहीं है। एक अबोध शिशु भी विभिन्न उपायों से माता के स्तनपान की अभिलाषा को प्रकट करता है। अतः वह राजा को परामर्श देता है कि वह राजनीति के कारण होने वाले महान् कष्ट को छोड़कर इच्छानुसार इन्द्रियसुखों का भोग करे। कहने का आशय यह है कि इसमें इन्द्रिय सुखों की बात कहकर चार्वाक के सिद्धान्त का अनुसरण करना बताया गया है। क्योंकि चार्वाक का सिद्धान्त है–

यावज्जीवेत् सुखं जीवेत, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

इस गद्यांश में प्रसादगुण, शान्तरस, अनुप्रास एवं काव्यलिंग अलंकार है। कामफल की प्राप्ति और कल्याण में ब्राह्मणों द्वारा किया गया स्वस्त्ययन अनुष्ठान कारण है, अतः काव्यलिंग अलंकार है।

व्याकरण–

दुःस्वप्नः–दुष्टः, स्वप्नः इति दुःस्वप्नः (कर्मधारय)। **अभेत्य**–अभि+आ+इण्+ल्यप्। **सौवर्णम्**–सुवर्णस्य विकारः सौवर्णम, सुवर्ण+अण्। **होमसाधनम्**–होमस्य साधनम् इसे (षष्ठी तत्पुरुष)।**गुणवत्**–गुणाः विद्यन्ते अस्मिन् इति। **बह्वपत्याः**–बहूनि अपत्यानि, येषां ते बह्वपत्याः (बहुब्रीहि)**वीर्यवन्तः**–वीर्यं विद्यन्ते एषामिति वीर्यवन्तः वीर्य+मतुप्। **स्वर्ग्यम्**–स्वर्ग+यत्+सु। **अरिष्टनाशनम्**–अरिष्टस्य नाशनम् इति अरिष्टनाशनम् (षष्ठी पुरुष)**नियतः**–नी+शतृ प्रत्यय, षष्ठी एकवचन।**नयज्ञस्य**–जानानीति ज्ञः, ज्ञा+क, नयस्य ज्ञः इति नयज्ञः, तस्य नयज्ञस्य।**दुरारक्ष्यम्**–दुःखेन आरक्षितुं रक्ष्यम्। दुर्+आ+रक्ष्+यत्। **अतिसंधातुम्**–अति+सम्+धा+तुमुन्।**अतिसंधातुम्**–अति+सम्+धा+तुमुन्।**अविश्वास्यता**–न विश्वास्यः इति अविश्वास्यः (नञ् तत्पुरुष) तस्य भाव।**लिप्सते**–लब्धुम् इच्छति इति लिप्सते। **अनुभूयन्ताम्**–अनु+भू कर्मवाच्य लोट् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन। **यथेष्टम्**–इष्टम् नतिक्रम्य इति यथेष्टम् (अव्ययीभाव समासः)

18.2.2 विहारभद्र द्वारा नीतिशास्त्रकारों की निंदा

येऽप्युपदिशन्ति–'एवमिन्द्रियाणि जेतव्यानि, एवमरिषड्वर्गस्त्याज्यः, सामादिरुपायवर्गः स्वेषु परेषु चाजस्रं प्रयोज्यः, सन्धिविग्रहचिन्तयैव नेयः कालः, स्वल्पोऽपि सुखस्यावकाशो न देयः' इति तैरप्येभिर्मन्त्रिवकैर्युष्मत्तष्चौर्यार्जितं धनं दासीगृहेष्वेव भुज्यते। के चैते वराकाः? येऽपि मन्त्रकर्कशास्त्रतन्त्रकर्त्तार शुक्राङ्गिरसविशालाक्षबाहुदन्तिपुत्रपराशरप्रभृतयस्तैः किमरिषड्वर्गो जितः, कृतं वा तैः शास्त्रानुष्ठानम्? तैरपि हि प्रारब्धेषु कार्येषु दृष्टे सिद्धयसिद्धी। पठन्तश्चापठद्भिरतिसन्धीयमाना बहवः। नन्दिवदमुपपन्नं देवस्य, यदुत सर्वलोकस्य वन्द्या जातिः, अयातयामं वयः, दर्शनीयं वपुः, अपरिमाणा विभूतिः। तत्सर्वं सर्वाविश्वासहेतुना सुखोपभोगप्रतिबन्धिना बहुमार्गविकल्पनात्सर्वकार्येष्वमुक्तसंशयेन तन्त्रावापेन भा कृथा वृथा। सन्तिहिते दन्तिनां दश सहस्त्राणि, हयानां लक्षत्रयम्, अनन्तं च पादातम्। अपि च पूर्णान्येव हेमरत्नैः कोशगृहाणि। सर्वश्चैव जीवलोकः समग्रमपि युगसहस्त्रं भुञ्जानो न ते कोष्ठागाराणि रेचयिष्यति। किमिदमपर्याप्तं यदन्यार्जितायासः क्रियते। जीवितं हि नाम जन्मवतां चतुःपंचाप्यहानि। तत्रापि भोगयोग्यमल्पाल्पं वयः खण्डम्। अपण्डिताः पुनर्जयन्त एव ध्वंसन्ते। नार्जितस्य वस्तुनो लवमप्यास्वादयितुमीहन्ते।

शब्दार्थ–

ये अपि–जो आप लोग भी। **उपदिशन्ति**–उपदेश देते है। **जेतव्यानि**–जीती जानी चाहिए। **सामादिरुपायवर्गः**–साम आदि उपायों का **समूह**–साम, दाम, दण्ड, भेद का समूह। **स्वेषु**–अपने लोगों पर। **परेषु**–शत्रु पक्ष के व्यक्तियों पर। **अजस्त्रम्**–लगातार। **प्रयोज्यः**–प्रयोग करना चाहिए। **सन्धिविग्रहचिन्तया**–सन्धि और संग्राम की चिन्ता से। **नेयः कालः**–समय व्यतीत करना चाहिए। **मन्त्रिवकै**–बकुलों के समान धोखेबाज। **युष्मत्तः**–आपसे। **चौर्यार्जितम्**–चोरी से प्राप्त किया गया। **दासीगृहेषु**–दासियों के घरों में। **भुज्यते**–भोगा जाता है। **वराकाः**–बेचारे। **मन्त्रकर्कशा**–मन्त्रों के सम्बन्ध में अति कठोर नियमों का अनुसरण कर जीवन व्यतीत करने वाले। **शास्त्रतन्त्र कर्त्तारः**–शास्त्रों एवं तन्त्रशास्त्रों के रचयिता। **शुक्राङ्गिरसविशालाक्षबाहुदन्तिपुत्रपराशरप्रभृतयः**–शुक्र, अङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र तथा पराशर आदि–शुक्र ने शुक्रनीति, अङ्गिरस अर्थात् बृहस्पति ने बृहस्पति स्मृति, विशालाक्ष अर्थात् शिव ने शिवस्मृति तथा पराशर ने पराशरस्मृति की रचना की थी। **शास्त्रानुष्ठानम्**–शास्त्रों का अनुसरण या पालन। **प्रारब्धेषु**–भाग्यो में। **दृष्टे**–देखी गयी है। **सिद्धयसिद्धीः**–सफलता और असफलता। **अतिसन्धीयमानाः**–ठगे जाते हुए। **बहवः**–अनेक लोग। **नन्दिवदमुपपन्नं देवस्य**–देव के क्या आपकी ये बाते मिली नहीं है। **सर्वलोकस्य वन्द्या**–सभी व्यक्तियों के द्वारा वन्दनीय अथवा पूजनीय। **जातिः**–कुल। **अयातयामम्**–जिसके उपभोग का काल अभी समाप्त नहीं हुआ है। **वयः**–अवस्था। **वपुः**–शरीर। **अपरिमाणा**–असीमित। **विभूतिः**–ऐश्वर्य। **तत्सर्वं**–उन सभी को। **सर्वाविश्वासहेतुना**–सभी लोगों के अविश्वास का कारण या हेतु। **तन्त्रावापेन**–तन्त्र अर्थात् राष्ट्र सम्बन्धी विचार विमर्श करना और देखभाल करना तथा आवाप अर्थात् शत्रुओं के विषय में विचार करने के द्वारा। **हयानाम्**–घोड़ों का। **अनन्तम्**–अनन्त। **पादातम्**–पैदल सेना। **कोशगृहाणि**–कोशगृह। **जीवलोकः**–जीवलोक। **युगसहस्त्रं**–हजार युगों तक। **भुंजानः**–खाता हुआ। **कोष्ठागाराणि**–अन्नभण्डारगृह। **रेचयिष्यति**–रिक्त नहीं करेगा। **आयास**–प्रयास।

जीवितम्–जीवन। **अहानि**–दिनो को। **भोगयोग्यम**–भोग करने में योग्य। **अल्पाल्पम्**–बहुत कम। **वयः खण्डम्**–आयु का भाग। **अपण्डिताः**– मूर्खता। **ध्वंसन्ते**–ध्वंस हो जाते हैं। **वस्तुनः**–वस्तुओं का। **लवमपि**–थोड़ा भी। **आस्वादयितुम्**–स्वाद लेने के लिए। **ईहन्ते**–इच्छा करते हैं।

अनुवाद –

जो (व्यक्ति राजा को) ऐसा उपदेश देता 'इस भाँति इन्द्रियों पर विजय प्राप्त की जानी चाहिए।' इस भाँति छः शत्रुओं (कामक्रोधादि) को त्यागना चाहिए, साम आदि (साम, दाम, दण्ड, भेद) उपायों का प्रयोग अपने शत्रु पक्ष के लोगों पर निरन्तर किया जाना चाहिए, सन्धि और विग्रह की चिन्ता में ही समय बिताना चाहिए, तनिक सा (क्षणमात्र) भी सुख को अवकाश नहीं दिया जाना चाहिए, ऐसे उन बगुला सदृश मन्त्रियों द्वारा आपके चोरी द्वारा पैदा किया गया हुआ धन, वेश्याओं के घरों में ही भोगा जाया करता है (अर्थात् ये बगुला–भगत उपदेशक मन्त्री आदि राज्य से चोरी करके प्राप्त किये हुए धन से वेश्याओं के घरों को भर दिया करते है और आनन्द लूटा करते हैं।) अब ये बेचारे (तो) क्या है? और जो ये नीतिशास्त्रकार तथा तन्त्रशास्त्रकार शुक्राचार्य, अङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र, पराशर इत्यादि थे, क्या इन लोगों के द्वारा छः शत्रुओं (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और मत्सर) पर विजय प्राप्त कर ली गयी थी? क्या उनके द्वारा शास्त्र का अनुष्ठान किया गया था? (अर्थात् क्या वे लोग शास्त्रानुसार चलते थे?) क्या प्रारम्भ किये हुए कार्यों में उनके द्वारा भी सिद्धियाँ (सफलताएँ) अथवा असिद्धियाँ (असफलताएँ) पहले से ज्ञात कर ली गयी थीं। पहले से पढ़े–लिखे लोग (भी) न पढ़े–लिखे लोगों द्वारा ठग लिए जाया करते हैं।देव को (महाराज को) ये (वस्तुएँ तो) प्राप्त ही है–सम्पूर्ण लोक द्वारा वन्दनीया जाति (कुल वंश), नवीन आयु, दर्शनीय शरीर तथा असीम ऐश्वर्य, अतः इन सबको स्वराष्ट्र–चिन्ता (तन्त्र) तथा पदचिन्ता के द्वारा व्यर्थ न कीजिए जो सभी लोगों के अविश्वास के कारण हैं, जो सुखों के उपभोगों के विरोधी हैं, जो अनेक मार्गों के बताने के कारण सभी कार्यों में संशय उत्पन्न करने वाले हैं। आपके पास दस हजार हाथी हैं, तीन लाख घोड़े हैं और असंख्य पैदल सिपाही (सेना) है और अपना कोष (खजाना) सुवर्ण तथा रत्नों से भरा पड़ा है। समस्त प्राणिवर्ग हजारों युगों तक खाता हुआ भी आपके भण्डार गृहों को खाली नहीं करेगा। (अर्थात् नहीं कर सकता है।) क्या यह प्र्याप्त नहीं कि और (भी) अधिक उपार्जन करने के निमित्त प्रयत्न किया जाता है (अर्थात् किया जाये)? (क्या आपके पास पर्याप्त धन नहीं है, जो आप और अधिक धन पैदा करने के लिए प्रयत्न करेंगे?) (संसार में) जन्म लेने वाले प्राणियों का जीवन तो चार–पाँच दिन का ही होता है (अर्थात् मानव जीवन अस्थायी हुआ करता है)। उसमें भी भोग विलास करने योग्य जो आयु का भाग हुआ करता है, वह तो (और भी) स्वल्पातिस्वल्प ही हुआ करता है। फिर मूर्ख लोग तो (धन) पैदा करते ही करते मर जाया करते हैं।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में सेवक विहारभद्र यह अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है अतः वह राजनीति ज्ञान सम्बन्धी नियमों को बताने एवं लिखने वाले नीतिशास्त्रकार तथा तन्त्रशास्त्रकारों की व्यापक रूप से भर्त्सना की है और राजा

को यह बताने का प्रयास किया है कि ये नीतिशास्त्रकार नियम तो बना देते है क्या स्वयं ये पालन करते है।

विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि जो भी इन्द्रियों को जीतने, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि अरिषड्वर्ग को त्यागने, अपने और शत्रुपक्ष के लोगों में निरन्तर सामादि उपायों का प्रयोग करने और सन्धि–विग्रह की चिन्ता के द्वारा समय बिताने और थोड़े से भी सुख का अवसर न देने का उपदेश देते हैं, मन्त्रीरूपी उन बगुलों के द्वारा आप से चोरी से अर्जित किया गया धन ,दासियों के घरों में भोगा जाता है।

राजनीतिशास्त्रकारों का उपहास करते हुए वह कहता है कि राजनीति के क्रूर सिद्धांतो का प्रतिपादन करने वाले ये शुक्र, आङ्गिरस, विशालाक्ष, बाहुदन्तिपुत्र आदि बेचारे हैं कौन? क्या इन्होंने स्वयं अरिषड्वर्ग को जीता था अथवा क्या उन्होंने शास्त्रों के अनुसार व्यवहार किया था। उनके द्वारा भी प्रारम्भ किए गए कार्यों में सफलता और असफलता देखी गई थी। राजनीति के सिद्धांतों को जानने वाले बहुत से लोग, इनके ज्ञान से शून्य लोगों के द्वारा ठगे गए हैं।

पुनः वह अनन्तवर्मा को भोगोन्मुखी बनाये रखने के लिए प्रशंसा करते हुए वह कहता है कि आप सम्पूर्ण लोक में सम्माननीय वंश में उत्पन्न हुए हैं, युवा हैं, सुन्दर शरीर और अपरिमित ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं। इन सबको सारे अविश्वास के हेतु और सुखों के उपभोग में बाधा उत्पन्न करने वाले, अनेक विकल्पों के होने से सभी कार्यों में संशय युक्त तन्त्रावाप (स्व और परराष्ट्र की चिन्ता) के द्वारा व्यर्थ मत कीजिए।

राजा को आश्वस्त करने की दृष्टि से वह कहता है कि आपके पास दस हजार हाथी, तीन लाख घोड़े और असंख्य पैदल सैनिक हैं। आपका कोश स्वर्ण और रत्नों से भरा हुआ है। यह सारा प्राणीलोक अगर हजार युगों तक भी उसका भोग करता रहे तो समाप्त नहीं होगा। फिर वह राजा से कहता है कि मनुष्य का जीवन बहुत छोटा होता है, उससे भी भोग के योग्य आयु (युवावस्था) बहुत कम होती है। वे मूर्ख होते हैं जो आजीवन केवल धन अर्जित करते रहते हैं। उसका भोग करने की लेशमात्र भी इच्छा नहीं करते अर्थात् कहने का आशय यह है कि नीतिशास्त्रकारों के द्वारा प्रणीत सभी नियम अनुचित एवं व्यर्थ है। उनका पालन करने से कोई लाभ नहीं होता है बल्कि सदाचारी एवं नियम पालन करने वाला व्यक्ति धूर्त मंत्रियों एवं दरबारियों के द्वारा ठगा जाता है इसलिए हे महाराज! आप भोग विलास करने योग्य चीजों का भोग करते हुए अपने जीवन को सार्थक बनाइये। इस प्रकार वह राजा को उचित मार्ग से अनुचित मार्ग की तरफ प्रेरित करता हैं।

इसमें में प्रसादगुण, शान्तरस, अनुप्रास अलंकार और चोरी से अर्जित धन वेश्याओं के घर धन से भरे जाने में हेतु होने से काव्यलिंग अलंकार है। इसमें सन्देह अलंकार भी है जिसका लक्षण है **'सन्देहः प्रकृतेऽन्यस्य संशयः प्रतिभोत्थितः।**

व्याकरण–

जेतव्यानि–जि+तव्य+द्वितीयाबहुवचन।**त्याज्यः**–त्यज्+ण्यत्+सु।**प्रयोज्यः**–प्र+युज्+यत्+सु। **सन्धि**–सम्+धा+कि।**नेयः**–नी+यत्+सु। **युष्मत्**–युष्मद्+तसिल्। **अर्जितम्**–अर्ज+क्त+सु। **प्रारब्धेषु**– प्र+आङ्+रभ्+क्त+सुप्। **दृष्टे**–दृश्+क्त+टाप्+औ। **अतिसन्धीयमाना**– अति+सम्+धा+शानच्। **विभूतिः**–वि+भू+क्तिन्+सु। **प्रतिबन्धी**–प्रति+बन्ध्+णिनि। **पादातम्**–पदाति+अण्+अम्। **युगसहस्त्रम्**–इसमें

'कालाध्वनोरत्यन्तसंयोगे' सूत्र **भुंजानः**– भुज+शानच्+सु। **अर्जनाय**–अर्जन्+ल्युट्। **जीवितम्**–जीव+क्त+अम्। **जन्मनाम्**–जन्मन्+इति+आम्। **आस्वादयितुम्**–आङ्+स्वद्+तुमुन्।

18.2.3 विहारभद्र का अनन्तवर्मा को स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव

किं बहुनाः, राज्यभारं भारक्षमेष्वन्तरङ्गेषु भक्तिमत्सु समर्प्य, अप्सरः प्रतिरूपाभिरन्तः पुरिकाभी रममाणो गीतसंगीतपानगोष्ठीश्च यथर्तु बध्नन् यथार्हं कुरु शरीरलाभम्, इति'' पंचाङ्गीमृष्टभूमिरंजलिचुम्बितचूडश्चिरमशेत। प्राहसीच्च प्रतिफुल्ललोचनोऽन्तः पुरप्रमदाजनः।जननाथश्च सस्मितम् 'उतिष्ठ, ननु हितोपदेशाद् गुरवो भवन्तः। किमिति गुरुत्वविपरीतमनुष्ठितम्' इति तमुत्थाप्य क्रीडानिर्भरमतिष्ठत्।

शब्दार्थ–

किं बहुनाः–अधिक कहने से क्या लाभ। **भारक्षमेषु**–राज्य का भारवहन करने में सक्षम लोगों पर। **अन्तरङ्गभूतेषु**–विश्वास पात्र लोगों पर। **समर्प्य**–सौंपकर। **अप्सरः प्रतिरूपाभिरन्तः**–अप्सराओं के समान सुन्दर स्त्रियों के साथ। **अन्तःपुरिकाभी**–अन्तः पुर की महिलाओं के साथ। **पान**–मदिरा का पान। **गोष्ठी**–मण्डली। **यथर्तु**–ऋतु अर्थात् समय के अनुसार। **बध्नन्**–करते हुए। **यथार्हं**–सार्थक। **शरीरलाभम्**–जन्म। **पंचाङ्गीमृष्टभूमि**–शरीर के पाँच अंग। **प्राहसीच्च**– हँस दिया। **प्रतिफुल्ललोचनः**–प्रसन्नता से पूर्णता विकसित नेत्रो वाले। **प्रमदाजनः**–महिलायें। **सस्मितम्**–थोड़ी हँसी के साथ। **हितोपदेशाद्**–कल्याणकारी उपदेश के कारण। **गुरवः**–महान। **किमिति**–क्यों। **गुरुत्वविपरीतमनुष्ठितम्**–महानता के विरुद्ध। **उत्थाप्य**–उठाकर। **क्रीडानिर्भरमतिः**–भोग–विलास में तल्लीन बुद्धि वाला राजा।

अनुवाद –

अधिक कहने से क्या लाभ? भारवहन करने में सक्षम, स्वयं के प्रति श्रद्धा रखने वाले तथा विश्वासपात्र मन्त्री आदि लोगों को (राज्य का कार्यभार) सौंपकर अप्सराओं के समान सुन्दर अन्तःपुर की नारियों के साथ भोग–विलास करते हुए, ऋतु (समय) के अनुसार गीत–वाद्य, मदिरापान के साथ मित्रगोष्ठी (का आयोजन) करते हुए शरीरलाभ (इस जन्म) को सार्थक करें। इस प्रकार कहकर (शरीर के) पांचों अंगों से भूमि को स्पर्श करता हुआ, मस्तक पर दोनों हाथ जोड़कर विहारभद्र बहुत काल तक (लेटा) सोता रहा। प्रसन्नता के कारण विकसित आँखों वाली रानिवास की महिलायें (भाव–विभोर होकर) हँस पड़ीं। थोड़ी हँसी (मुस्कुराहट) के साथ राजा ने भी उठिये, कल्याणकारी उपदेश देने के कारण आप (मेरे) गुरु हैं। आपने महानता (बडप्पन) के विरुद्ध व्यवहार क्यों किया? इस प्रकार कहकर, उसे उठाकर (अपने भी) भोग–विलास के रस मे डूब गया अर्थात् स्वयं भीं भोग–विलास करने लगा।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विहारभद्र राजा को परामर्श देता है कि–हे राजन! अनन्तवर्मा आप भी राज्य के राजनैतिक, प्रशासनिक, आर्थिक, सामाजिक बातों पर ध्यान न दे करके राज्य के रमणीय वस्तुओं का भोग करिये।

विहारभद्र सेवक कहना चाहता है कि वह राज्य का भार विश्वस्त लोगों पर सौंप दे और अन्तःपुर की स्त्रियों के साथ रमण करते हुए ऋतुओं के अनुसार गीत–संगीत और (मद्य) पान की सभाओं का आयोजन करते हुए सुख का अनुभव करे, यह कहकर वह साष्टांग भूमि पर लेट गया। राजा तथा अन्तःपुर की स्त्रियाँ उसकी इस चेष्टा पर हँस पड़ते है। राजा की प्रकृति ही भोगपरक थी। अतः वह विहारभद्र की बातों को अपने लिए हितकारी मानते हुए उसे अपना गुरु घोषित करता है। वह उसके मतानुसार व्यवहार करते हुए राजनीति तथा वसुरक्षित, दोनों की अवहेलना करने लगता है। इस प्रकार आप राज्य पर किसी भी प्रकार का ध्यान न दीजिए। इस प्रकार राजा अनन्तवर्मा के सेवक विहारभद्र द्वारा दिये गए अनुचित तथा कुमार्गगामी उपदेश को सुनकर थोड़ी मुस्कुराहट के साथ उसको अपना गुरु मानकर और उसे महत्त्व देकर जमीन से उठाया और भोग–विलास के रस में डूब गया तथा वृद्ध मंत्री वसुरक्षित का अपमान करने लगा।

इस गद्यांश में माधुर्य एवं प्रसादगुण, श्रृंगार रस तथा अनुप्रास अलंकार है। आप मेरे गुरु हैं–इसमें हितोपदेश करना हेतु होने से काव्यलिंग अलंकार है। इसके अतिरिक्त शान्तरस एवं हास्य रस भी है। काव्यलिंग एवं संसृष्टि अलंकार है, जिनका लक्षण है– **'यद्येत एवालङ्काराः परस्परविमिश्रिताः तदा पृथगलङ्कारौ संसृष्टिः।**

व्याकरण–

भारक्षमेषु–भारे क्षमाः इति भारक्षमाः तेषु भारक्षमेषु।**अन्तरङ्गभूतेषु**–अन्तः अंगम् इति अन्तरंगम्, अन्तरंगभूताः इति अन्तरंगभूता तेषु इति अन्तरंगभूतेषु। **अप्सरप्रतिरूपाभिः**–अप्सरसां इव प्रतिरूपं यासां ता अप्सरः प्रतिरूपाः ताभिः। **गीतसंगीतपानगोष्ठी**–गीतं च संगीतं च पानं च इति गीतसंगीत पानानि (द्वन्द्व), तेषां गोष्ठयः इति गीत संगीतपानगोष्ठयः ताः गीतसंगीतपानगोष्ठीः।**यथार्हम्**–यथा अहं यस्य सः यथार्हः तम् (बहुब्रीहि)।**अजंलिचुम्बितचूडः**–अंजलिना चूम्बिता चूड़ा येन सः (बहुब्रीहि)। **प्रीतिप्रफुल्ललोचनः**–प्रीत्या फुल्लानि, विकसितानि लोचनानि यस्य सः (बहुब्रीहि)। **प्रमदानजनः**–प्रमदानां जनः इति षष्ठी तत्पुरुष।**सस्मितम्**–विद्यमानं स्मित सस्मिन् कर्मणि तत्।**हितोपदेशात्**–हितस्य उपदेश (षष्ठी तत्पुरुष) हितोपदेशः तस्मात्। **क्रीडारसनिर्भरमतिः**–क्रीडायाः रसः (षष्ठी तत्पुरुष) तस्मिन् निर्भरा मतिः यस्य सः (बहुब्रीहि)।**अचितज्ञः**–जानातीतिज्ञः चित्तस्यज्ञः इति चित्तज्ञः (षष्ठी तत्पुरुष) न चित्तज्ञः अचितज्ञः (नञ् तत्पुरुष)।**उत्थाप्य**–उत्+स्था+णिच्+ल्यप्।

18.2.4 अनन्तवर्मा द्वारा मंत्री वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा

अथैषु दिनेषु भूयोभूयः प्रस्तुतेऽर्थे प्रेर्यमाणो मन्त्रिवृद्धेन वचसाभ्युपेत्य मनसैवाचित्तज्ञ इत्यवज्ञातवान्। अथैवं मन्त्रिणो मनस्यभूत्–''अहो मे मोहाद् बालिश्यम्। अरुचितेऽर्थे चोदयन्नर्थीवाक्षिगतोऽहमस्य हास्यो जातः। स्पष्टमस्य चेष्टानामयथापूर्व्यम्। तथाहि। न मां स्निग्धं पश्यति, न स्मितपूर्वं भाषते, न रहस्यानि विवृणोति, न हस्ते स्पृशाति, न व्यसनेष्वनुकम्पते, नोत्सवेष्वनुगृह्णाति, न विलोभनवस्तूनि प्रेषयति, न मत्सुकृतानि प्रगणयति, न

मे गृहवार्तां पृच्छति, न मत्पक्ष्यान् प्रत्यवेक्षते, न मामासन्नकार्येष्वभ्यन्तरीकरोति, न मामन्तःपुरं प्रवेशयति। अपि च– मामनर्हेषु कर्मसु नियुङ्क्ते, मदासनमन्यैरवष्टभ्यमानमनुजानति, मद्वैरिषु विश्रम्भं दर्शयति मदुक्तस्योत्तरं न ददाति, मत्समानदोषान् विगर्हयति, मर्मणि मामुपहसति, स्वमतमपि मया वर्ण्यमानं प्रतिक्षिपति, महार्हाणि वस्तूनि मत्प्रहितानि नाभिनन्दति, नयज्ञानां स्खलितानि मत्समक्षं मूर्खैरुद्घोषयति।

शब्दार्थ–

भूयोभूयः–पुनः–पुनः। **प्रेर्यमाणो**–प्रेरित किया जाता हुआ। **अचित्तज्ञः**–चित्त की वृत्ति को न जानने वाला। **अवज्ञानवान्**–तिरस्कार किया। **मोहात्**–अज्ञानता के कारण। **बालिश्यम्**–मूर्खता। **अरुचिते अर्थे**–ऐसा कार्य जो अच्छा नही लगता। **चोदयन्**–प्रेरित करता हुआ। **अक्षिगतः**–द्वेष का पात्र। **न विवृणोति**–नहीं बतलाता। **व्यसनेशु**–विपत्तियो में। **न अनुकम्पते**–दया नहीं दिखलाता। **विलोकन वस्तूनि**–लुभाने वाली वस्तुएँ। **सुकृतानि**–उत्तम कार्यों को। **न प्रगणयति**–नहीं गिनता। **न अवेक्षते**–नहीं देखता है। **आसन्नकार्येषु**–निकटतम कार्यों में गोपनीय कार्यों में। **न अभ्यन्तरी करोति**–विश्वास नहीं करता। **अनुजानाति**–स्वीकृति दे देता है। **अवष्टम्य मानम्**–दखल दिया जाता हुआ। **विश्रम्भम्**–विश्वास। **विगर्हयति**–निन्दा करता है। **वर्ण्यमानम्**–वर्णन किया जाता हुआ। **प्रतिक्षिपति**–आक्षेप करता है। **महार्हाणि**–बहुमूल्य। **यत्प्रतिहतानि**–मेरे द्वारा भेजी हुई। **न अभिनन्दति**–स्वागत नहीं करता है। **स्खलितानि**–दोषों को।

अनुवाद –

इन दिनों उपस्थित कार्यों में पुनः पुनः मन्त्रिवृद्ध के द्वारा प्रेरित किया जाता हुआ, वाणी से स्वीकार करके, मन में (यह मेरे) चित्त को जानने वाला नहीं है, ऐसा (सोचकर अनन्तवर्मा उसका) तिरस्कार करने लगा। तब मन्त्री के मन में (इसे) प्रेरित करता हुआ मैं, आँखों में खटकने वाले भिखारी के समान इसके उपहास का पात्र बन गया हूँ। यह तो स्पष्ट ही है कि इसका व्यवहार पूर्ववत् नहीं है। जैसे कि यह मुझे स्नेहपूर्वक नहीं देखता है, न मुस्कुराते हुए बात करता है, न गुप्त बातों को बतलाता है, न हाथ से स्पर्श करता है, न विपत्तियों में सहानुभूति प्रदर्शित करता है, न उत्सवों में अनुग्रह करता है, न आकर्षक वस्तुओं को (मेरे घर) भिजवाता है, न मेरे अच्छे कार्यों का मान करता है, न मेरे घर के समाचार को पूछता है, न मेरे पक्ष के लोगों को अनुग्रहपूर्वक देखता है, न उपस्थित कार्यों में मुझ पर विश्वास करता है, न अन्तःपुर में मुझे प्रवेश कराता है। और भी, अयोग्य कार्यों में मुझे नियुक्त करता है, मेरे आसन पर अन्य व्यक्तियों द्वारा अधिकार किये जाने की आज्ञा देता है, मेरे दुश्मनों के प्रति विश्वास दिखलाता है। मेरे द्वारा कही गयी बातों का उत्तर नहीं देता। मुझ जैसे निर्दोष लोगों की निन्दा करता है, मेरा मर्मपीड़ापरक उपहास करता है, मेरे द्वारा वर्णन किए जाते हुए, अपने मत का भी, तिरस्कार करता है, मेरे द्वारा भेजी गई बहूमूल्य वस्तुओं का अभिनन्दन नहीं करता, नीतिज्ञों की भूलों को मेरे समक्ष मूर्खों के द्वारा उद्घोषित करवाता है।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है।

वसुरक्षित स्नेहवश हितकामना से राजा को राजनीति में रुचि लेने का परामर्श देता है। अनन्तवर्मा उसकी बातों से प्रभावित होता है और तदनुसार व्यवहार करने का वचन देता है, किन्तु विहारभद्र अपनी चाटुकारितापूर्ण बातों से अनन्तवर्मा को पुनः राजनीति और वसुरक्षित दोनों से विमुख कर देता है। अनन्तवर्मा के व्यहार में आए हुए परिवर्तन को वसुरक्षित अनुभव कर लेता है और सोचता है कि मैं मोहवश कैसी मूर्खता कर रहा हूँ। राजनीति में इसकी रुचि नहीं है और मैं इसके उपहास का पात्र बन गया हूँ। इसका व्यवहार अब पहले के समान नहीं रहा, न ही मुझे प्रेम से देखता है, न मुस्कुराकर बोलता है, न रहस्यों को प्रकट करता है, न उपहाररूप में प्राप्त आकर्षक वस्तुओं को (मेरे घर) भेजता है, न मेरे द्वारा किए गए अच्छे कार्यों का मान करता है, न मेरे घर की वार्ता को पूछता है, न मेरे पक्ष के लोगों की ओर देखता है, न अत्यन्त गोपनीय कार्यों में सम्मिलित करता है और न ही अन्तःपुर में मुझे प्रवेश करवाता है। इतना ही नहीं, वसुरक्षित यह भी अनुभव करता है, उसके शत्रुओं पर वह विश्वास प्रदर्शित करता है। उसके वचनों का उत्तर नहीं देता है। उसके समान निर्दोष लोगों की निन्दा करता है और उसके मर्म का उपहास करता है।

संस्कृत व्याकरण–

प्रेर्यमाणः–प्र+इट्+शानच्। **अभ्युपेत्य**–अभि+उप्+इण्+ल्यप्। **अवज्ञातवान्**–अव+ज्ञा+क्तवतु। **बालिष्यम्**–बालिशस्य भावः कर्म वा बालिश्यम्। बालिश+ष्यञ्। **हास्यः**–हस्+ण्यत्। **अयथापूर्व्यम्**–पूर्वम् अन्तिक्रम्य इति यथापूर्वम् (अद्वयीभाव) न यथापूर्वम्, इति अयथापूर्वम् (नञ् तत्पुरुष), अयथा पूर्वस्य भावः इति आयथापूर्व्यम् (अथवा पूर्व+ष्यञ्)। **विलोमन वस्तूनि**–विलोमनानि च तानि वस्तूनि इति विलोमन वस्तूनि (कर्मधारय)। **पक्ष्यान्**–पक्षे भवाः पक्ष्याः। **पक्ष्य**–पक्ष+यत्। **आसन्न कार्येषु**–आसन्नानि च तानि कार्याणि इति आसन्न कार्याणि तेषु आसन्नाकार्येषु (कर्मधारय) **अवष्टम्भमानम्**–अव+स्तम्भ्+कर्मणि शानच्। **वर्ण्यमानम्**–वर्ण+शानच्। **महार्हाणि**–महान् अर्हः येषां तानि महार्हाणि (बहुवचन)

18.2.5 वसुरक्षित द्वारा तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय

सत्यमाह चाणक्यः–'चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्थ्या अपि प्रियाः स्युः। दक्षिणा अपि तदभावबहिष्कृता द्वेष्या भवेयुः इति। तथापि का गतिः। अविनीतोऽपि न परित्याज्यः पितृपैतामहैरस्मादृशैरयमधिपतिः। अपरित्यजन्तोऽपि कमुपकारमश्नूयमाणवाचः कुर्मः। सर्वथा नयज्ञस्य वसन्तभानोरश्मकेन्द्रस्य हस्ते राज्यमिदं पतितम्। अपि नामापदो भाविन्यः प्रकृतिस्थमेनमापादयेयुः। अनर्थेषु सुलभव्यलीकेषु क्वचिदुत्पन्नोऽपि द्वेषः सद्वृत्तमस्मै न रोचयेत्। भवतु भविता तावदनर्थः। स्तम्भितपिशुनजिह्वो यथाकथंचिदभ्रष्टपदस्तिष्ठेयम् इति।

शब्दार्थ–

चित्तज्ञानानुवर्तिनः–राजा के चित्त को ज्ञान करके अनुवर्तन करने वाले। **द्वेष्याः**–शत्रु। **भाविन्यः**–भविष्य में होने वाली। **सुलभव्यलीकेषु**–जिनमें दुःख मिलना बहुत सरल तथा स्वाभाविक है, ऐसे अनर्थों में। **पिशुन**–चुगलखोर। **यथाकथचिंत्**–जिसे किसी भी

प्रकार। **अभ्रष्टपदः** जिसका मन्त्रिपद भ्रष्ट न हो ।

अनुवाद –

चाणक्य ने सत्य कहा है–मन के भावों को जानकर व्यवहार करने वाले लोग अनिष्टकारी होने पर भी प्रिय होते हैं। उसके मन के भावों के बाहर रहने वाले, निपुण होने पर भी द्वेष के योग्य होते हैं। फिर भी क्या उपाय है? अविनीत होने पर भी यह राजा , पिता और पितामह के सदृश हम जैसों के द्वारा परित्याग के योग्य नहीं है। परित्याग न करते हुए भी, न सुने जाते हुए वचनों वाले हम क्या उपकार करेंगे? नीतिज्ञ अश्मकराज वसन्तभानु के हाथ यह राज्य पूर्णतया गया हुआ (समझो)। सम्भवतः भविष्य में आने वाले संकट इसे प्रकृतिस्थ (विवेकबुद्धि से युक्त) बना दें। अथवा सरलता से कष्ट देने वाली विपत्तियों में, उत्पन्न हुआ द्वेष, कहीं इसके लिए सदाचार को रुचिकर न बनाये (अर्थात् कहीं इसे सदाचार से अरुचि न हो जाए) अस्तु, अनर्थ तो होगा ही। चुगली करने वाली जीभ को वश में करके किसी प्रकार, (अपने) पद में च्युत न हुआ, स्थित रहूँ।

व्याख्या–

प्रस्तुत गद्यांश दण्डी विरचित 'दशकुमारचरितम्' के अष्टम उच्छवास 'विश्रुतचरितम्' से लिया गया है।

इस गद्यांश में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों कों याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया।

ऐसा नहीं है कि राजा केवल वसुरक्षित के विचारों की ही अवहेलना करता था, अपितु उसके द्वारा कहे गए अपने मत का भी तिरस्कार करता था। वसुरक्षित आचार्य चाणक्य के मत को स्मरण करता है, जिसके अनुसार जो लोग राजा के मन के अनुकूल व्यवहार करने वाले होते हैं, वे अहितकारी होते हुए भी प्रिय होते है–**चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्थ्या अपि प्रियाः स्युः।** जबकि उसका हित चाहने वाले, उसके मन के विपरीत आचरण करने वाला होने से ईर्ष्या के पात्र बन जाते हैं। कुलपरम्परा से राजसेवा में रत रहने के कारण, इतना अपमानित होने पर भी वसुरक्षित, राजा का परित्याग करने में स्वयं को विवश पाता है–**तथापि का गति। अविनोतोऽपि न परित्याज्यः।** यद्यपि वह यह भी जानता है कि जब राजा उसके वचनों की ओर ध्यान नहीं देता, तो वह भला उसका क्या उपकार कर पायेगा। नीतिज्ञ अश्मकराज, वसन्तभानु की वक्रदृष्टि विदर्भ पर है और वह इस राज्य पर अपना अधिकार स्थापित करके ही रहेगा, ऐसी आंशका उसके मन में व्याप्त होने लगती है। वह अपने मन को आश्वासन देता है कि सम्भवतः भविष्य में आने वाले संकटो के कारण अनन्तवर्मा राजनीति में रुचि लेने लगे अथवा सहज पीड़ा से युक्त उन स्थितियों में उत्पन्न हुए द्वेष के कारण दण्डनीति इसे रुचिकर ही न लगे। परिस्थितियों से मानों हार मानते हुए वह कहता है कि अनर्थ तो अवश्यम्भावी है। अच्छा है कि अपनी वाणी को वश में रखते हुए मैं अपने पद पर बना रहूँ।

संस्कृत व्याकरण–

चित्तज्ञानानुवर्तिनः–चित्तस्य ज्ञानम् इति चित्त ज्ञानम् (षष्ठी तत्पुरुष) चित्तज्ञानं अनुवर्तितुं शीलं प्रेषाम् ते इति चित्तज्ञानानुवर्तिनः (उपपद तत्पुरुष) **तद्भाव**

बहिष्कृताः—तस्य भावाः इति तद्भावाः (षष्ठी तत्पुरुष) ताद्भावेभ्यः बहिष्कृताः इति तद्भाव बहिष्कृताः (पंचमी तत्पुरुष) **अभ्रष्टपदः**—न भ्रष्टपदं यस्य सः (बहुव्रीहि)।

बोध प्रश्न—1

1. निम्नलिखित प्रश्नों के ठीक उत्तरों पर सही (√) का चिन्ह लगाइयें

I. राजा अनन्तवर्मा रात्रिचर्या के अष्टम भाग में क्या करता था? (आय व्यय विवरण /पुरोहितो के द्वारा दुःस्वप्न वृतान्त)

II. दुःस्वप्न को नष्ट करने का क्या उपाय है? (शान्तिकर्म/प्रायश्चित कर्म)

बोध प्रश्न—2

2. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

I. शान्तिकर्म में दिया गया दान .....कराने वाला है। (स्वर्ग को प्राप्त/नरक को प्राप्त)

II. दरिद्रता की जन्मभूमि ..... है। (अविश्वास/ विश्वास)

बोध प्रश्न 3

1. अनन्तवर्मा मंत्री वसुरक्षित का किस प्रकार तिरस्कार करता है ?

.....

.....

.....

.....

.....

2. अनन्तवर्मा द्वारा तिरस्कृत वसुरक्षित क्या महसूस करता है ?

.....

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न 1

1. अनन्तवर्मा द्वारा वसुरक्षित के तिरस्कार को अपने शब्दों में लिखिए।

18.3 सारांश

विश्रुतचरितम् 11—15 परिच्छेद तक अनुवाद, व्याख्या और व्याकरण खण्ड—4 के अन्तर्गत आता है। परिच्छेद 11 में रात्रि के अष्टम भाग पुरोहितों से मिलने तथा धार्मिक कार्यों के लिए विहित है, इसके पश्चात् दिन में किए जाने वाले कार्य किये जाते है। इस प्रकार सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा से कहता है कि—शास्त्र पढ़ने से कोई लाभ नहीं है। इच्छानुसार भोग करिए। परिच्छेद 12 में विहारभद्र अनुभव करता है कि राजा अभी भी वसुरक्षित के उपदेश के प्रभाव में है अतः वह नीतिशास्त्रकारों की निंदा करते हुए कहता है वह नियम तो बना देते है लेकिन स्वयं उसका पालन नहीं

करते। परिच्छेद 13 में सेवक विहारभद्र राजा अनन्तवर्मा को राज्य का भार मंत्री आदि पर छोड़कर स्वेच्छापूर्वक विहार करने के लिए सुझाव देता है। परिच्छेद 14 में अनन्तवर्मा सेवक विहारभद्र के सुझाव से चलकर मंत्री वृद्ध वसुरक्षित का तिरस्कार एवं उसकी उपेक्षा करता है। परिच्छेद 15 में विहारभद्र के द्वारा दिए गए उपदेशों का पालन करते हुए अनन्तवर्मा को देखकर वसुरक्षित अपनी विवशता को व्यक्त करते हुए पूर्ववर्ती नीतिशास्त्रकारों के विचारों के याद करते हुए यथोचित तटस्थ होकर पदानुसार कार्य करने का निर्णय लिया। इन सबका मनुष्य के जीवन में कितना महत्त्व है, इन सब विषयों को समझने में सरलता हुई।

18.4 शब्दावली

स्वीकृति देना – अनुमति देना

सम्मिलित नहीं करता – विश्वास नहीं करता

आँखों में चुभने वाला – द्वेष किये जाने वाला योग्य या खटकने वाला

दक्षिणा – राजा के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति से युक्त नीतिज्ञ

चित्तज्ञानुवर्तिन – चित्त अथवा मन के विकार को समझकर अनुकूल व्यवहार करने वाला

18.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- विश्रुतचरितम् (संस्कृत हिन्दी व्याख्या सहित) सम्पादक एवं व्याख्याकार डॉ॰ विश्वनाथ शर्मा, हंसा प्रकाशन ,जयपुर
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार डॉ॰ शशिशेखर चतुर्वेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
- विश्रुतचरितम्, व्याख्याकार मीनाकुमारी, जे.पी. पब्लिशिंग हाउस ,शक्तिनगर दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का इतिहास, डॉ॰ उमाशंकर शर्मा 'ऋषि', चौखम्बा भारती अकादमी
- संस्कृत साहित्य का विशद इतिहास, श्रीमती पुष्पा गुप्ता, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली
- संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार, इलाहाबाद

18.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न–1

1. (i) पुरोहितो के द्वारा दुःस्वप्न वृतान्त (ii) शान्तिकर्म

बोध प्रश्न–2

2. (i) स्वर्ग को प्राप्त (ii) अविश्वास

बोध प्रश्न 3

1 वसुरक्षित स्नेहवश हितकामना से राजा को राजनीति में रुचि लेने का परामर्श देता है। अनन्तवर्मा उसकी बातों से प्रभावित होता है और तदनुसार व्यवहार करने का वचन देता है, किन्तु विहारभद्र अपनी चाटुकारितापूर्ण बातों से अनन्तवर्मा को पुनः राजनीति और वसुरक्षित दोनों से विमुख कर देता है। अनन्तवर्मा के व्यवहार में आए हुए परिवर्तन को वसुरक्षित अनुभव कर लेता है और सोचता है कि मैं मोहवश कैसी मूर्खता कर रहा हूँ ? राजनीति में इसकी रुचि नहीं है और मैं इसके उपहास का पात्र बन गया हूँ। इसका व्यवहार अब पहले के समान नहीं रहा, न ही मुझे प्रेम से देखता है, न मुस्कुराकर बोलता है, न रहस्यों को प्रकट करता है, न उपहाररूप में प्राप्त आकर्षक वस्तुओं को (मेरे घर) भेजता है, न मेरे द्वारा किए गए अच्छे कार्यों का मान करता है, न मेरे घर की वार्ता को पूछता है, न मेरे पक्ष के लोगों की ओर देखता है, न अत्यन्त गोपनीय कार्यों में सम्मिलित करता है और न ही अन्तःपुर में मुझे प्रवेश करवाता है। इतना ही नहीं, वसुरक्षित यह भी अनुभव करता है, उसके शत्रुओं पर विश्वास प्रदर्शित करता है। उसके वचनों का उत्तर नहीं देता है। उसके समान दोष वालों की निन्दा करता है और उसके मर्म का उपहास करता है।

2 राजा केवल वसुरक्षित के विचारों की ही अवहेलना ही नहीं करता था, अपितु उसके द्वारा कहे गए अपने मत का भी तिरस्कार करता था। वसुरक्षित आचार्य चाणक्य के मत को स्मरण करता है, जिसके अनुसार जो लोग राजा के मन के अनुकूल व्यवहार करने वाले होते हैं, वे अहितकारी होते हुए भी प्रिय होते है–**चित्तज्ञानानुवर्तिनोऽनर्थ्या अपि प्रियाः स्युः।** जबकि उसका हित चाहने वाले, उसके मन के विपरीत आचरण करने वाला होने से ईर्ष्या के पात्र बन जाते हैं। कुलपरम्परा से राजसेवा में रत रहने के कारण, इतना अपमानित होने पर भी वसुरक्षित, राजा का परित्याग करने में स्वयं को विवश पाता है–**तथापि का गतिः। अविनोतोऽपि न परित्याज्यः।** यद्यपि वह यह भी जानता है कि जब राजा उसके वचनों की ओर ध्यान नहीं देता, तो वह भला उसका क्या उपकार कर पायेगा। नीतिज्ञ अश्मकराज, वसन्तभानु की वक्रदृष्टि विदर्भ पर है और वह इस राज्य पर अपना अधिकार स्थापित करके ही रहेगा, ऐसी आंशका उसके मन में व्याप्त होने लगती है। वह अपने मन को आश्वासन देता है कि सम्भवतः भविष्य में आने वाले संकटो के कारण अनन्तवर्मा राजनीति में रुचि लेने लगे अथवा सहज पीड़ा से युक्त उन स्थितियों में उत्पन्न हुए द्वेष के कारण दण्डनीति इसे रुचिकर ही न लगे। परिस्थितियों से मानों हार मानते हुए वह कहता है कि अनर्थ तो अवश्यम्भावी है। अच्छा है कि अपनी वाणी को वश में रखते हुए मैं अपने पद पर बना रहूँ।

अभ्यास प्रश्न–

इस प्रश्न का उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।